कुरुक्षेत्र

अप्रैल 1993

मूल्य तीन रुपये

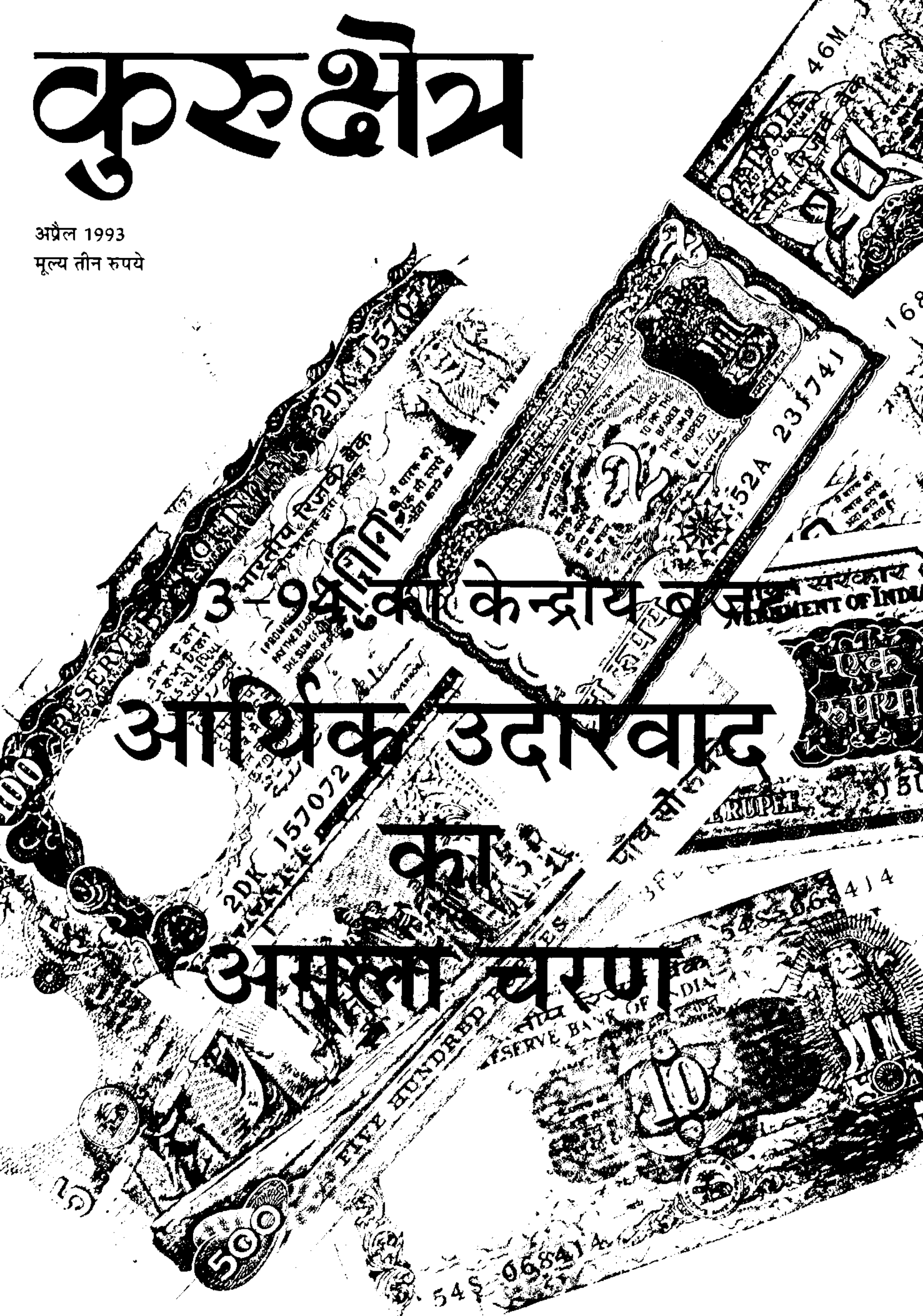

1993-94 का केन्द्रीय बजट

आर्थिक उदारवाद का अगला चरण

1993-1994 के बजट की विशेषताएं

- रुपये की पूर्ण परिवर्तनीयता।
- उत्पाद और सीमा शुल्क में भारी में कटौतियां, उपभोक्ता वस्तुओं पर भारी रियायतें।
- व्यक्तिगत आयकर ढांचा पूर्ववत।
- कृषि, वानिकी, बागवानी, मुर्गीपालन और मछली पालन से जुड़ी वस्तुएं सस्ती होंगी।
- ग्रामीण विकास को विशेष महत्व - परिव्यय 62 प्रतिशत बढ़ा।
- सामाजिक सेवाओं और मानव संसाधनों के विकास पर बल - शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए परिव्यय बढ़ा। सभी गांवों में पेयजल उपलब्ध कराने का लक्ष्य।
- औद्योगिक रूप से पिछड़े राज्यों और बिजली उत्पादन तथा वितरण से जुड़े नये उद्यमों को 5 वर्ष तक करों में छूट।

वर्ष 38 अंक 6 चैत्र-वैशाख शक 1915

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य, चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

संपादक	:	राम बोध मिश्र
सह संपादक	:	बलदेव सिंह मदान
उप संपादक	:	ललिता जोशी

विज्ञापन प्रबंधक	:	बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक	:	जसवंत सिंह
सहायक व्यापार व्यवस्थापक	:	एडवर्ड बैक
उत्पादन अधिकारी	:	एस.एम. चहल
आवरण सज्जा	:	आशा सक्सेना

एक प्रति : 3.00 रु० वार्षिक चंदा : 30 रु०

फोटो साभार : रमेश चन्द्र, फोटो प्रभाग, ग्रामीण विकास मंत्रालय

विषय सूची

1993-94 का बजट : आर्थिक उदारवाद का अगला चरण 2
राजेन्द्र भट्ट

आम लोगों पर बजट का असर 5
शैलेन्द्र

बजट में कृषि एवं ग्रामीण विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता 8
ओम प्रकाश दत्त

विकासोन्मुखी ग्रामीण बजट 11
डॉ. हरिश्चन्द्र मालवीय

बजट में ग्रामीण ऋण की व्यवस्था 13
आर्यैंद्र उपाध्याय

भूमि सुधार : एक सिंहावलोकन 14
रामजी प्रसाद सिंह

भूमि सुधार : कितने सार्थक, कितने कारगर 19
नवीन पन्त

भारत में भूमि सुधार एवं ग्रामीण विकास 23
डॉ. लक्ष्मीरानी कुलश्रेष्ठ

अवशेष (कहानी) 26
रीना तिवारी

कृषि उत्पादन पर भूमि-सुधारों का प्रभाव 29
आर.के. शर्मा, अनिल कुमार और एस.के. चौहान

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का पुनर्निमाण-एक अहम् समस्या 31
डॉ. ज्योति कपूर एवं डॉ. जी.एस. शेखावत

योग्यता का मापदण्ड क्या है? 34
मीना हटवाल

सरकारी कार्यक्रम और ग्रामीण विकास 36
डॉ. राकेश अग्रवाल

खाद्य प्रशोधन उद्योग का बढ़ता महत्व 38
डॉ. अभय कुमार मीतल

ग्रामीण विकास में लोगों की भागीदारी 39
डॉ. विशाल सिंह

ग्रामीण निर्धनता - एक चुनौती 40
अलका कुशवाहा

पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास की सम्भावनायें एवं सुझाव 41
डॉ. नवीन चन्द्र त्रिपाठी

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। **दूरभाष : 384888**

1993-94 का बजट : आर्थिक उदारवाद का अगला चरण

✍ राजेन्द्र भट्ट

"हमने निराशा की भविष्यवाणी करने वाले उन विशेषज्ञों पैगंबरों को गलत साबित कर दिया है जिनका मानना था कि नई आर्थिक नीतियों से लाखों लोग बेरोजगार हो जायेंगे।" 27 फरवरी, 1993 को लोकसभा में 1993-94 का बजट प्रस्तुत करते हुए इस स्पष्ट घोषणा के साथ वित्त मंत्री ने आर्थिक उदारवाद की नीति जारी रखने का संकल्प व्यक्त किया। डा. मनमोहन सिंह ने अपने कथन की पुष्टि में घटती मुद्रा स्फीति और बढ़ती आर्थिक वृद्धि दर का हवाला दिया। अगस्त 1991 में मुद्रा स्फीति की वार्षिक दर 17 प्रतिशत थी, जो अब 7 प्रतिशत से कम है। अर्थव्यवस्था की विकास दर 1991-92 में मात्र 1.2 प्रतिशत से कम रह गई थी, 1992-93 में इसके करीब 4 प्रतिशत रहने का अनुमान है। आर्थिक नीतियों का औचित्य सिद्ध करते हुए, बजट में भविष्य के लिये जो दिशा निर्देश हैं, उनका सार संक्षेप में कुछ इस प्रकार है - 1. केन्द्र और राज्य सरकारों का घाटा कम करके मुद्रा स्फीति पर नियंत्रण, 2. ग्रामीण विकास, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रमों पर विशेष बल, 3. कृषि और कृषि आधारित उद्योगों को हर संभव सहायता, 4. निरंतर औद्योगिक प्रगति, 5. उदार तथा युक्तिसंगत कर प्रणाली और 6. निर्यात बढ़ाकर भुगतान संतुलन की स्थिति में सुधार। इस वर्ष के बजट प्रस्ताव इन्हीं लक्ष्यों के अनुरूप हैं।

उद्योग को राहतें

बजट के सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान उद्योग और व्यापार जगत से जुड़े हैं। सबसे महत्वपूर्ण कदम है आयात-निर्यात के लिए दोहरी मुद्रा विनिमय प्रणाली की समाप्ति। अब विदेशी मुद्रा की 60 प्रतिशत कमाई बाजार दर पर और 40 प्रतिशत सरकारी दर पर परिवर्तित नहीं होगी। बल्कि पूरी कमाई बाजार दर पर रुपयों में बदल जायेगी। आयात के लिए भी बाजार दर पर विदेशी मुद्रा खरीदनी होगी। इस कदम से निर्यात को बढ़ावा मिलेगा लेकिन रुपये की पूर्ण परिवर्तनीयता से इसके अवमूल्यन, और इस तरह आयात पर, खास तौर से पेट्रोलियम पदार्थों के आयात पर, खर्च बढ़ने के भी आसार हैं। मौद्रिक सुधारों की इसी कड़ी में बजट में बैंकों में जमा और बैंक से ऋण की दरों में एक प्रतिशत की कमी, बैंकों का पूंजीगत आधार मजबूत बनाने के लिए 5,700 करोड़ रुपए का सरकारी अंशदान, उनके कारोबार में गड़बड़ियां रोकने और कमियां दूर करने के लिए रिजर्व बैंक में निगरानी बोर्ड का गठन, बीमा उद्योग में सुधार के लिए उच्चाधिकार समिति बनाना और शेयर बाजार के कारोबार पर निगरानी रखने के लिए इनकी नियंत्रक संस्था सेबी को ज्यादा अधिकार देना शामिल है।

उद्योगों को बढ़ावा देने की इस प्रक्रिया का दूसरा पक्ष है - उत्पाद और सीमा शुल्कों में भारी कटौती। बजट में विभिन्न वस्तुओं पर उत्पाद और सीमा शुल्कों में कुल 4,522 करोड़ रुपए की रियायतें दी गई हैं। रंगीन टेलीविज़न, फ्रिज, कूलर, एअरकंडीशन, पालिएस्टर धागे और पूंजीगत वस्तुओं पर रियायतें दी गयी हैं। उम्मीद है कि उद्योग उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क की रियायतों का यह फायदा उपभोक्ताओं को देंगे और इस तरह मध्यमवर्गीय उपभोक्ता की क्रय शक्ति बढ़ेगी।

ऐसे बाजार में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा और विकास का माहौल बनेगा। नीचे दी गयी सारणी में विभिन्न वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क में दी गयी रियायतों का ब्यौरा दिया गया है--

वस्तु	वर्तमान उत्पाद शुल्क	बजट में प्रस्तावित उत्पाद शुल्क
1. साधारण कूलर	23 प्रतिशत	10 प्रतिशत
2. बिजली के पंखे	17.25 प्रतिशत	15 प्रतिशत
3. बिजली के कुछ घरेलू उपकरण	23 प्रतिशत	15 प्रतिशत
4. रेडियो सेट	23 प्रतिशत	10 प्रतिशत
5. डीजल से चलने वाले लदान और परिवहन वाले मोटर वाहन, उनकी चेसिस तथा. तिपहिया वाहन	23 प्रतिशत	15 प्रतिशत
6. मोटर कार	55 प्रतिशत	40 प्रतिशत

7. रंगीन टेलिवीजन	1925 रु. से 4785 रु.	1250 रु. से 2200 रु. तक
8. फ्रिज	575 रु. से 5750 रु.	400 रु. से 3500 रु.
9. रेफ्रीजिरेशन उपकरण	69 प्रतिशत मूल्यानुसार	20 प्रतिशत मूल्यानुसार
10. एअर कंडीशनर	13800 रु. से 85100 रु.	7000 रु. से 70000 रु. तक
11. सौन्दर्य प्रसाधन	120.75 प्रतिशत	70 प्रतिशत
12. वनस्पति	1900 रु. प्रति मीट्रिक टन	1500 रु प्रति मीट्रिक टन
13. पालिएस्टर नायलान धागे	80.60 रु. प्रति किग्रा. से 71.50 रु. प्रति किग्रा.	69 रु. प्रति किग्रा. से 57.50 रु. प्रति किग्रा

इनके अलावा चाय, काफी से उत्पाद शुल्क पूरी तरह हटा लिया गया है। टूथपेस्ट, सस्ते जूते, चप्पलों, बिस्कुटों आदि पर भी उत्पाद शुल्क में रियायतें दी गयी है।

नये उद्योगों की पूंजीगत लागत कम करने के लिए पूंजीगत मशीनरी पर 10 प्रतिशत की एक समान दर से उत्पादन शुल्क लगेगा। बिजली उत्पादन से संबद्ध मशीनरी पर यह शुल्क 5 प्रतिशत ही होगा। वर्तमान दरें 11.5 प्रतिशत से 23 प्रतिशत के बीच हैं।

देश के विकास की बुनियाद ऊर्जा पर टिकी है। इसे देखते हुए बिजली के उत्पाद और वितरण से जुड़े सभी नये उद्योगों से होने वाले लाभ को अगले पांच वर्ष तक कर मुक्त कर दिया गया है। पिछड़े क्षेत्रों में नये उद्योग खोलने को प्रोत्साहन देने के लिए विभिन्न राज्यों और केन्द्र शासित क्षेत्रों में खोले जाने वाले नये उद्योगों को भी 5 वर्षों तक करों में छूट दी गयी है। ये राज्य और केन्द्र शासित क्षेत्र हैं – सभी पूर्वोत्तर राज्य, सिक्किम, जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, गोवा, अंडमान निकोबार द्वीप समूह, दादरा और नगर हवेली, दमन और दीव, लक्षदीप और पांडेचरी।

इसके अलावा पूंजीगत मशीनरी और हिस्से पूर्जों के आयात शुल्क में भारी कमी की गयी है। आम तौर पर यह कटौती 55 प्रतिशत से घटाकर 35 प्रतिशत कर दी गयी है। प्राथमिकताओं वाले क्षेत्रों, खासतौर से ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्रों में यह दर और भी कम कर दी गयी है। इसके अलावा विभिन्न वस्तुओं पर आयात शुल्क की दरों को निश्चित श्रेणियों में बांटकर युक्तिसंगत बनाया गया है। इलेक्ट्रानिक उद्योग की पूंजीगत वस्तुओं और परियोजनाओं के आयात पर शुल्क घटाकर 25 प्रतिशत की समान दर कर दी गयी है। पोजिटिव और नेगिटिव फिल्म रोलों पर शुल्क को एक समान और युक्तिसंगत बनाया गया है। लौह धातुओं पर यह शुल्क अब 12.5 प्रतिशत और 15 प्रतिशत होगा। तांबे, जस्त, सीसे पर 15 प्रतिशत और एल्यूमिनियम पर 25 प्रतिशत शुल्क होगा।

लघु उद्योग क्षेत्र को भी बजट में रियायतें दी गयी है। अब 10 लाख तक लागत वाले उद्योगों को पंजीकरण नहीं कराना होगा। अभी यह सीमा 7.5 लाख रुपये है। इन उद्योगों को उनके उत्पादों के अनुसार, 20 लाख से 30 लाख रुपये तक के कारोबार में उत्पाद शुल्क में राहत थी। अब राहत की सीमा एक समान 30 लाख रुपये कर दी गयी है।

बजट में शीरे तथा वाहनों के टायर ट्यूबों पर उत्पाद शुल्क बढ़ाया गया है।

कृषि और ग्रामीण विकास को प्रोत्साहन

बजट में कृषि और ग्रामीण विकास से जुड़ी मदों को दुतरफा प्रोत्साहन दिए गए हैं। एक ओर इन क्षेत्रों से जुड़े साज-समान को उत्पादन शुल्क में रियायतें दी गयी हैं तथा दूसरी ओर इन क्षेत्रों के लिए व्यय भी बढ़ाया गया है।

खेती, बागवानी, वानिकी और मुर्गीपालन से जुड़ी विभिन्न मशीनों पर आयात शुल्क 55 प्रतिशत से घटाकर 25 कर दिया गया है। राइस ट्रांसप्लाटरों पर आयात शुल्क 40 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया गया है। मछली पकड़ने की आउट बोर्ड मोटरों पर शुल्क 40 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत करने का प्रस्ताव है। 1800 सी सी से ज्यादा क्षमता वाले टैक्ट्ररों पर उत्पाद शुल्क 10 प्रतिशत और ट्रेलरों पर 15 प्रतिशत करने का प्रस्ताव है। इस समय यह शुल्क क्रमश: 17 25 प्रतिशत और 23 प्रतिशत है।

आगामी वर्ष की केन्द्रीय योजना में ग्रामीण विकास मंत्रालय के परिव्यय में 62 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है। इस मंत्रालय के लिए 5010 करोड़ रुपए की राशि रखी गयी है। संसाधनों की कमी और कटौती के इस दौर में ग्रामीण विकास के लिए यह भारी वृद्धि बताती है कि सरकार इस क्षेत्र को कितना अधिक महत्व देती है। ग्रामीण विकास के लिए दी गयी इस राशि का ब्योरेवार विवरण इस प्रकार है:

1. जवाहर रोजगार योजना के तहत गांवों में 11000 लाख दिहाड़ियों के बराबर रोजगार का सृजन करना, स्वरोजगार के लिए ट्राइसेम योजना के तहत 35 लाख ग्रामीण युवाओं को प्रशिक्षण देना। इस काम के लिए 3,306 करोड़ रुपए रखे गये हैं।

2. समन्वित ग्रामीण विकास योजना के अंतर्गत गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे 27.36 लाख परिवारों का जीवन स्तर सुधारने का लक्ष्य है। इस उद्देश्य के लिए 630 करोड़ रुपए का प्रावधान है।

3. पानी के किसी भी स्रोत से रहित, 1,61,722 गांवों में पेयजल पहुंचाने के लिए 740 करोड़ रुपए रखे गये हैं।

4. इसके अलावा 3210 गांवों में, आगामी वित्त वर्ष में, बिजली पहुंचाई जायेगी। 2.76 लाख पंप सेटों को बिजली दी जायेगी और कुटीर ज्योति कार्यक्रम के तहत ढाई लाख परिवारों को एक पाइंट वाला बिजली का कनेक्शन दिया जायेगा।

5. कृषि के लिए व्यय 2,436 करोड़ रुपये रखा गया है। इसमें डेयरी विकास और मछली पालन जैसे संबद्ध क्षेत्र शामिल हैं। पिछले वर्ष से यह करीब 25 प्रतिशत अधिक है।

डेयरी विकास के लिए आवटंन पिछले वर्ष के 100 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 258 करोड़ कर दिया गया है। मछली पालन योजनाओं के लिए 116 करोड़ रुपये रखे गये हैं। यह पिछले वर्ष से 37 करोड़ रुपये अधिक है।

ऊर्जा के बढ़ते संकट को देखते हुए, खास तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में, ऊर्जा के भरोसेमंद और किफायती स्रोतों के रूप में अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों का महत्व निर्विवाद है। गोबर, सौर और पवन ऊर्जा के इस्तेमाल के इन अक्षय स्रोतों का वाजिब इस्तेमाल होता है, इससे ईंधन के लिए वनों का कटान बचता है और खाद के काम आने वाले गोबर जैसे उत्पाद, जलाने के काम आकर नष्ट नहीं होते।

बजट में इन्हीं बातों का ध्यान रखते हुए अपंरपरागत ऊर्जा स्रोतों के लिए 204 करोड़ रुपए रखे गये हैं। इस वर्ष 1.62 लाख, बायोगैस संयंत्र बनाने, 22.5 लाख उन्नत चूल्हे उपलब्ध कराने, 1000 सौर वोल्टेइक जल पंपिंग प्रणालियां और 11,700 अन्य सौर वोल्टेइक प्रणालियां स्थापित करने का लक्ष्य है। 55,000 मेगावाट सौर ऊर्जा जमा कर सकने वाला संग्रहण केन्द्र भी बनाया जायेगा।

शिक्षा को महत्व

इस बजट की खास बात है शिक्षा को ज्यादा महत्व दिया जाना। शिक्षा पर परिव्यय 37.6 प्रतिशत बढ़ाकर 1,310 करोड़ कर दिया गया है। प्राथमिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, लड़कियों और महिलाओं की शिक्षा तथा साक्षरता अभियान पर विशेष बल दिया गया है। शिक्षा को पिछले कई वर्षो से कम महत्वपूर्ण क्षेत्र मानकर, इस मद में कंजूसी की जाती रही है। राष्ट्र निर्माण में शिक्षा की भूमिका को देखते हुए इसके लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था करना सराहनीय है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए बजट में पिछले वर्ष से 60 प्रतिशत अधिक राशि रखी गयी है। इस वर्ष इस मद पर 483 करोड़ रुपये रखे गये हैं। मुख्य जोर संक्रामक और अन्य रोगों की रोकथाम तथा परिवार नियोजन कार्यक्रमों पर होगा।

प्रत्यक्ष कर

बजट में वेतन भोगी आयकर दाताओं को बहुत मामूली रियायत दी गयी है। आयकर में छूट 28,000 रु.वार्षिक तक वेतन सीमा और कर ढांचा यथावत रखा गया है। अधिकतम मानक कटौती की राशि में 3000 रुपये वृद्धि करके इसे 15000 रुपए कर दिया गया है। 75000 रु. तक वार्षिक वेतन वाली कामकाजी महिलाओं के लिए यह छूट 18,000 रुपये होगी।

75000 रुपए से कम वार्षिक आय वाले वृद्धजनों को आयकर में 20 प्रतिशत छूट मिलेगी। दान कर के उद्देश्य से छूट की सीमा 30,000 रुपए कर दी गयी है। उपहार कर में छूट की सीमा भी 30,000 रुपये करने का प्रस्ताव है।

रुपया आए कहां से -रुपया जाए कहां रे

अब सरकार के आय व्यय पर एक नजर डालना दिलचस्प होगा। बजट में कुल 1,27,009 करोड़ रुपए की कुल प्राप्तियों का अनुमान है। इसमें राजस्व और पूंजीगत प्राप्तियां शामिल हैं। योजना गत और गैर योजनागत मदों पर कुल 1,31,327 करोड़ रुपए व्यय का अनुमान है। इस तरह कुल अनुमानित बजट घाटा 4,314 करोड़ रुपए होगा।

सरकार की प्राप्तियों में उत्पाद शुल्क से 22 प्रतिशत, सीमा शुल्क से 18 प्रतिशत, आंतरिक ऋणों से 18 प्रतिशत, गैर ऋण पूंजीगत प्राप्तियों से 7 प्रतिशत करों के अलावा राजस्व से 14 प्रतिशत, विदेशी ऋणों और भारतीय रिजर्व बैंक के ऋणों से तीन तीन प्रतिशत, निगम कर से 7 प्रतिशत, आय कर से 6 प्रतिशत और अन्य करों से 2 प्रतिशत राशि प्राप्त होगी।

जहां तक व्यय का प्रश्न है, ऋणों पर दिए जाने वाले ब्याज पर बजट का एक चौथाई यानी 25 प्रतिशत खर्च होगा। केन्द्रीय आयोजना पर 15 प्रतिशत, प्रतिरक्षा पर 13 प्रतिशत, अन्य गैर योजना व्यय 12 प्रतिशत, राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों को योजना सहायता पर 12 प्रतिशत और सबसिडी पर 5 प्रतिशत खर्च होगा। राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों को गैर योजनागत सहायता 4 प्रतिशत होगी। करों और शुल्कों में राज्यों का हिस्सा 14 प्रतिशत होगा।

बजट विकास की दिशा का संकेतक है। इस बजट के प्रावधानों और दिशा निर्देशों पर यदि ईमानदारी और दक्षता से अमल हो सका तो यह उद्योग, बाजार और ग्रामीण विकास को बढ़ावा दे सकेगा।

के-77 बी, डी.डी.ए. फलैट्स,
शेख सराय, फेज-2, नई दिल्ली-110017

आम लोगों पर बजट का असर

शैलेन्द्र

आजादी के बाद संभवत: 1993-94 का केन्द्रीय बजट ऐसा पहला बजट है कि जिसमें समाज के सभी वर्गों के लिए कुछ न कुछ लाभप्रद जरूर है। शायद पहली बार ही आम उपभोक्ताओं, किसानों और ग्रामीण क्षेत्रों की ओर भी विशेष ध्यान दिया गया है। यदि आज से दो वर्ष पूर्व की भारत की दिवालियेपन के कगार पर पहुंची अर्थव्यवस्था को याद करें तो डॉ. मनमोहन सिंह के इस बजट का महत्व और बढ़ जाता है। इससे पूरे राष्ट्र का आत्मविश्वास बढ़ा है। ऐसा लगता है कि 1993-94 का बजट इस विश्वास पर आधारित है कि सुअवसर प्रदान किये जाने पर भारतीय अर्थव्यवस्था में तेजी से विकास करने की क्षमता मौजूद है और अभी तक अनछुई संभावनाओं का पता लगाकर भारत को अग्रणी राष्ट्रों की श्रेणी में पहुंचाया जा सकता है। करों के उदार ढांचे को जारी रखने के लिए विकास दर का तेज होना और राजस्व का बढ़ना जरूरी है। इसलिए देशवासियों को चाहिए कि बजट में बेमतलब मीनमेख निकालने की बजाए औद्योगिक, वित्तीय और व्यावसायिक विस्तार के नये प्रावधानों का यथाशीघ्र इस्तेमाल करें। इससे न केवल व्यक्तिगत बल्कि राष्ट्र की समृद्धि होगी। राष्ट्र समृद्ध होगा तो प्रत्येक नागरिक भी सुखी रहेगा।

देश के आर्थिक परिदृश्य पर नजर डालने से आशा के संकेत स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। संकट व परेशानियों के जिस दौर से दो साल पहले हमारे देश की अर्थव्यवस्था गुजर रही थी उस पर काबू पाने तथा प्रगति की रफ्तार बढ़ाने में पिछले बीस महीनों में उल्लेखनीय सफलता मिली है।

वर्ष 1992-93 की आर्थिक समीक्षा से पता चलता है कि वर्ष 1991-92 की तुलना में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में हुई प्रगति सन्तोषजनक ही नहीं, उत्साहवर्धक भी है। सकल घरेलू उत्पादन में चार प्रतिशत से अधिक की बढ़ोतरी नयी गतिशीलता की द्योतक है। सबसे उल्लेखनीय उपलब्धि मुद्रास्फीति पर प्रभावी नियंत्रण है। आम आदमी पर ही महंगाई की मार सबसे अधिक पड़ती है। कमरतोड़ मंहगाई जिस रफ्तार से बढ़ रही थी उस पर अंकुश लगाने के बाद मुद्रास्फीति की दर घटने लगी है। 1993-94 के बजट से कई उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतें कम होनी शुरू भी हो गयीं हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं पर बढ़ती हुई मुद्रास्फीति का शिकंजा इतना मजबूत होता है कि दुनिया में कई देशों का आर्थिक विकास इस वजह से बुरी तरह प्रभावित हुआ है। थोक मूल्यों के सूचकांक के अनुसार मुद्रास्फीति की दर, जो वर्ष 1991-92 के अन्त में 13.5 प्रतिशत आंकी गयी थी, 30 जनवरी, 1993 को घटकर 6.9 प्रतिशत हो गयी। सरकार ने राजकोषीय घाटे को दो वर्षों में 8.4 प्रतिशत से घटाकर पांच प्रतिशत पर लाने में सफलता पायी है। इस गति को और आगे बढ़ाने की जरूरत है।

आर्थिक सुधार

आर्थिक सुधार एक निरन्तर प्रक्रिया है। विगत दो वर्षों के दौरान भारत में न केवल आर्थिक, औद्योगिक और व्यापार के क्षेत्र में नीतिगत परिवर्तन कर अर्थव्यवस्था को नयी दिशा और गति प्रदान की गयी अपितु उन नीतियों के पालन को सरल, सामान्य एवं विश्व की अन्य अर्थव्यवस्थाओं के समरूप बनाने की दिशा में भी कदम उठाये गये हैं। आर्थिक विकास हेतु विदेशी पूंजी को आकृष्ट करने के लिए जहां अनेक प्रकार के प्रोत्साहन व सुविधाएं दी गयीं वहां नियमों व कानूनों को भी आसान बनाया गया। साथ ही सीमा शुल्कों में अनेक रियायतें भी दी गयीं जिससे तस्करी की रोकथाम तो होगी ही, सामानों की गुणवत्ता व कीमत में प्रतियोगिता बढ़ेगी।

सोना और चांदी भारतीय जनता को बहुत प्रिय हैं। स्वर्ण आयात योजना से 1992-93 के बजट में भारत को एक साल में 75 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा की प्राप्ति का अनुमान था मगर पिछले साल भर में सरकार को राजस्व के रूप में 250 करोड़ रुपए की इससे अतिरिक्त आय हुई। इतना ही नहीं इससे सोने की आवक तो बढ़ी ही उसकी कीमतों में भी गिरावट आयी। इससे प्रेरित होकर चांदी के आयात को छूट दी गयी और कुछ इलैक्ट्रानिक वस्तुओं पर सीमा शुल्क में मूल्यानुसार 105 प्रतिशत की भारी रियायत देने की घोषणा की गयी। घरेलू उपयोग व इलैक्ट्रानिक उपकरणों की 35 चीजों की एक सूची सरकार ने जारी की है जिसे भारत लेकर आने पर केवल 150 प्रतिशत सीमा शुल्क देना होगा। पहले सीमा शुल्क की यह दर 225 प्रतिशत थी।

इनमें वैक्यूम क्लीनर, कपड़े धोने की मशीनें, फोटो कैमरे, इलैक्ट्रानिक डायरी, निजी कम्प्यूटर, माइक्रोवेव ओवन, कुकिंग रेंज, टेलीविजन, इलैक्ट्रानिक खेल आदि शामिल हैं। इनमें अधिकांश वस्तुएं ऐसी हैं जिन्हें आम तौर पर भारतीय स्वदेश लौटते वक्त लाना चाहते हैं।

इस बजट में कई चीजें सस्ती की गयीं हैं जिसका लाभ उठाकर मध्यम वर्ग के लोग अपना जीवन स्तर सुधार सकते हैं। टी.वी., फ्रिज, पंखे, पेस्ट, पाउडर, क्रीम, बिस्कुट, चाय, काफी, वनस्पति आदि कतिपय वस्तुओं को अब सस्ते दाम पर लिया जा सकता है। खादी ग्रामोद्योग और एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के तहत बनने वाले जूते भी उत्पाद शुल्क से पूरी तरह मुक्त कर दिये गये हैं। कूलर पर 13 फीसदी, बिजली के पंखों पर सवा सात फीसदी, बिजली के घरेलू उपकरणों पर 8 प्रतिशत, सेल बैटरियों पर साढ़े नौ प्रतिशत, मुद्रण व लेखन स्याही पर सवा सात प्रतिशत, रेडियो सेट पर 13 फीसदी, दन्त मंजन, नूडल व भुने हुए खाद्यान्नों पर सवा सात प्रतिशत, बिस्कुट पर चार फीसदी, सांचे में ढलाई से बने प्लास्टिक सामान पर साढ़े नौ प्रतिशत और रबड़ के गद्दों पर 39 प्रतिशत उत्पाद शुल्क घटा दिया गया है। माचिस व प्लाईवुड पर भी उत्पाद शुल्क घटाया गया है।

वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में कहा कि मुद्रास्फीति से प्रभावित हुए आम लोगों के उपभोग की अनेक वस्तुओं पर कराधान में वह राहत दे रहे हैं। काफी और चाय को उन्होंने उत्पाद शुल्क से पूरी तरह मुक्त कर दिया है। वनस्पति पर से भी उत्पाद शुल्क की दर 1900 रुपए से कम करके 1500 रुपए प्रति मीट्रिक टन कर दी गयी है। कार, फ्रिज, टेलीविजन तो सस्ते हो भी गये हैं, सिंथेटिक कपड़ों को आम आदमी की पहुंच में लाने के लिए वित्त मंत्री ने पोलिस्टर, फिलामेंट यार्न पर उत्पाद शुल्क 80.60 रुपए प्रति किलोग्राम से कम करके 69 रुपए प्रति किलोग्राम और नाइलान फिलामेंट यार्न पर उत्पादन शुल्क को 71.50 रुपए प्रति किलोग्राम से कम करके 57.50 रुपए प्रति किलोग्राम कर दिया है। पोलिएस्टर स्टेपल फाइबर पर भी एक रुपए प्रति किलोग्राम उत्पादन शुल्क घटाया गया है। विस्कास स्टेपल फाइबर पर उत्पाद शुल्क 15.60 रुपए से घटाकर 14.95 रुपए प्रति किलोग्राम कर दिया गया है।

सामाजिक क्षेत्र

इस बजट की सबसे बड़ी खासियत यह है कि संभवत: पहली बार सामाजिक क्षेत्र को अहमियत दी गयी है जिसका लाभ विशाल ग्रामीण क्षेत्र को मिलेगा और इससे हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन के नेताओं का ग्रामोत्थान का सपना साकार करने में मदद मिलेगी। सामाजिक सुरक्षा तंत्र योजना सुदृढ़ कर दी गयी है। सामाजिक विकास के लिए सहायता का इसमें व्यापक प्रावधान है। अब तक के सबसे कम घाटे वाले इस बजट में परिवार कल्याण, स्वास्थ्य, शिक्षा, ग्रामीण विकास आदि क्षेत्रों में तीस से लेकर साठ प्रतिशत अधिक धन की व्यवस्था की गयी है। सामाजिक विकास के विभिन्न क्षेत्रों में राज्यों का निवेश अधिक होता है। इसलिए केन्द्रीय योजना में इस बार 32 प्रतिशत की बढ़ोतरी की गयी है जिसका उद्देश्य राज्यों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है। ग्रामीण विकास के मद में तो 62 प्रतिशत की भारी वृद्धि की गयी है। वित्त मंत्री का कहना है कि इससे ग्रामीण क्षेत्र में पूंजी निवेश और रोजगार में वृद्धि होगी। रोजगार के अवसर उत्पन्न करने वाली प्रमुख जवाहर रोजगार योजना के मद में आबंटित राशि 2,046 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 3,306 करोड़ रुपए कर दी गयी है। ग्रामीण युवकों के प्रशिक्षण की ऐसी व्यवस्था की गयी है कि साढ़े तीन लाख युवक स्वरोजगार कार्यक्रम प्रशिक्षण पा सकेंगे।

ग्रामीण जल आपूर्ति के मद में आबंटित राशि 460 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 740 करोड़ रुपए कर दी गयी है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ करने की दिशा में भी ठोस कदम उठाये गये हैं। गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करने के लिए मजबूर 27.36 लाख ग्रामीण परिवारों की सहायता हेतु समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 630 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया है। पेय जल की समस्या वाले 1,61,722 गांवों में 1993-94 में पेय जल आपूर्ति किये जाने के साथ लगभग 23 हजार अन्य ग्रामों में इसकी व्यवस्था का लक्ष्य है। गांवों में बिजली पहुंचाने की राज्यों की योजनाओं में सहायता प्रदान करने हेतु बजट में 286 करोड़ रुपए की व्यवस्था की गयी है। 1993-94 में और 3210 ग्रामों में बिजली बत्ती पहुंचा दी जायेगी। इसके अलावा 276 लाख नलकूप (पम्प सेट्स) चालू किये जायेंगे। गरीबी रेखा के नीचे के ढाई लाख परिवारों को कुटीर ज्योति योजना के अन्तर्गत बिजली के कनेक्शन दिये जाएंगे।

राज्यों व केन्द्रशासित क्षेत्रों को बजट में केन्द्रीय सहायता में भारी वृद्धि भी इस बजट की एक विशेष महत्वपूर्ण बात है। 19 प्रतिशत तक की सहायता केन्द्र से मिलेगी। इस मद में फिलहाल 16,111 करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसे बढ़ाकर अब वित्त

मंत्री ने 18,010 करोड़ रुपए कर दिया है।

विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पहलू हमारी जनसंख्या है जिसमें हो रही बेतहाशा वृद्धि विकास की गति में सर्वाधिक बाधक सिद्ध होती है। इसलिए परिवार कल्याण के मद में भी इस बार 270 करोड़ रुपए अधिक की व्यवस्था की गयी है। स्वास्थ्य के मद में इस बजट में 60 प्रतिशत अधिक राशि का प्रावधान किया गया है। चिकित्सा और सार्वजनिक स्वास्थ्य के मद में राशि बढ़ाकर 302 से 483 करोड़ रुपए की व्यवस्था की गयी है। परिवार कल्याण के मद में कुल 1,270 करोड़ रुपए का प्रावधान है। महिला व बाल विकास के मद में 450 करोड़ रुपए की तुलना में 566 करोड़ रुपए की व्यवस्था की गयी है।

शिक्षा को विकास का महत्वपूर्ण अंग मानते हुए इस क्षेत्र में भी 37.6 फीसदी की बढ़ोतरी की गयी है। खास तौर पर प्राथमिक शिक्षा, महिलाओं के लिए शिक्षा और ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में शिक्षा पर इस बार विशेष जोर दिया गया है। आठवीं योजना में शिक्षा को उच्च प्राथमिकता दी गयी है। सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों की महिलाओं व बच्चों के लिए भी अधिक धन प्रदान किया गया है। कल्याण मंत्रालय को भी 530 करोड़ रुपए की जगह इस बार 630 करोड़ रुपए दिये गये हैं। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त व विकास निगम तथा राष्ट्रीय पिछड़े वर्ग वित्त व विकास निगम के लिए भी अधिक धन का प्रावधान किया गया है। इसमें और वृद्धि का विचार है। सफाई कर्मचारियों की मुक्ति और पुनर्वास पर 73 करोड़ रुपए खर्च होंगे। अनुसूचित जाति व जन जाति की योजनाओं पर 247 करोड़ रुपए की विशेष केन्द्रीय सहायता दिये जाने की भी व्यवस्था की गयी है।

कृषि क्षेत्र

लघु उद्योग की छोटी इकाइयों को और ज्यादा प्रोत्साहित किये जाने के साथ ही कृषि क्षेत्र को राहत दी गयी है। ट्रेक्टरों पर उत्पादन शुल्क कम किया गया है। कागज बनाने में चावल व गेहूं की भूसी के प्रयोग पर रियायती शुल्क की व्यवस्था की गयी है और कोल्ड स्टोरेज उपकरणों पर उत्पाद शुल्क में उल्लेखनीय छूट दी गयी है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों को बढ़ावा देने की दिशा में भी कई कदम उठाये गये हैं। कृषि और उद्योग के लिए ज्यादा ऋण की व्यवस्था की गयी है और ब्याज दर को भी कम किया गया है।

कृषि, बागवानी, वानिकी, मुर्गीपालन के क्षेत्र में उपयोग में लायी जाने वाली मशीनरी के विभिन्न मदों पर आयात शुल्क 55 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त चावल के ट्रांसप्लाटंरों और ग्रांड पैरेट मुर्गीपालन स्टाक पर आयात शुल्क कम किया गया है। मछली पकड़ने में उपयोगी आउट बोर्ड मोटरों तथा निर्दिष्ट कीटनाशकों पर भी आयात शुल्क घटाया गया है। कुछ कीटनाशकों पर तो आयात शुल्क 65 से 110 प्रतिशत के बीच था जिसे कम करके 50 प्रतिशत कर दिया गया है। बागवानी और ग्रीन हाउस के लिए निर्दिष्ट वस्तुओं पर आयात शुल्क घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया है। 1800 सी.सी. से ऊपर की ईंजन क्षमता वाले ट्रेक्टर और ट्रेलरों पर उत्पादन शुल्क घटाकर दस और पन्द्रह प्रतिशत कर दिया गया है।

कृषि मंत्रालय की आयोजना गत योजनाओं के लिए बजटीय आबंटन 1,408 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 1,718 करोड़ रुपए कर दिया गया है। ग्रामीण क्षेत्र में ग्यारह हजार लाख श्रम दिवस के बराबर रोजगार उपलब्ध कराने की योजना है। देश के 80 पिछड़े जिलों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में सुधार के लिए सहायता दी जायेगी ताकि प्रसव के दौरान महिलाओं की मृत्यु दर कम हो।

ऋणों पर ब्याज दर घटाया गया है। कृषि क्षेत्र में ग्रामीण ऋण की राशि 13,800 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 16,500 करोड़ रुपए की गयी है। यह वृद्धि बीस फीसदी बैठती है। राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक द्वारा पुन: वित्तीय सहायता दिये जाने की राशि में भी 22 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है।

कुल मिलाकर सुनहरे भविष्य के लिए स्थायित्व के साथ निरन्तर प्रगति का भरोसा ही आम आदमी के लिए महत्वपूर्ण है। आम उपभोक्ता वस्तुओं की कीमत आम लोगों के पहुंच से बाहर न हो, तो ही यह बजट सफल है।

सियाराम कुंज,
सी 2 डी/69 ए- जनकपुरी,
नई दिल्ली-110058

वर्ष 1993-94 का केन्द्रीय बजट

कृषि एवं ग्रामीण विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता

ओम प्रकाश दत्त

संसद के बजट अधिवेशन के फरवरी माह के अंतिम सप्ताह में आरम्भ होने के पहले दिन उसके दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में अपने अभिभाषण में राष्ट्रपति डॉ. शंकर दयाल शर्मा ने सरकार के इस संकल्प को दोहराया कि वह अर्थव्यवस्था को विदेशी पूंजीनिवेश व अंतराष्ट्रीय स्पर्धा के लिए खोलने की अपनी नीतियों को जारी रखेगी और उदारीकरण के कार्यक्रम को गति प्रदान करेगी। उनके इस कंथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अब नियंत्रित अर्थव्यवस्था के दिन लद गये हैं। राष्ट्रपति ने अपने अभिभाषण में कृषि विकास तथा सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सुदृढ़ बनाने की नीति के निश्चय पर भी बल दिया और कहा कि सरकार कृषि जिन्सों के मूल्यों में वृद्धि को साढ़े तीन प्रतिशत तक सीमित रखने में सफल रही है और खरीफ तथा रबी दोनों फसलें बहुत अच्छी होने से आगे भी मूल्य स्थिरता की आशा बंधती है।

राष्ट्रपति का पारम्परिक अभिभाषण नए वर्ष में सरकार की भावी नीतियों का संकेत दिया करता है। राष्ट्रपति के अभिभाषण के पांच दिन बाद वित्त मंत्री डा मनमोहन सिंह ने वर्ष 1993-94 के लिए 63,936 करोड़ रुपए के प्रावधान का जो बजट संसद में प्रस्तुत किया उसमें आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया को जारी रखते हुए एक ओर खुली अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने तथा औद्योगिक विकास व निर्यात में तेजी लाने के लिए उद्योगों को उत्पाद व सीमा शुल्कों में अनेक रियायतें देने की घोषणा की गयी है और दूसरी ओर कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे सामाजिक क्षेत्रों के लिए पहले से काफी अधिक धन की व्यवस्था की गयी है। वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में स्पष्ट किया कि हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि हमारी आर्थिक नीति से कृषि को पूरी तरह समर्थन मिले क्योंकि कृषि क्षेत्र पर ही देश की अधिकांश जनता की जीविका तथा कल्याण निर्भर है। उनका कहना था कि कृषि प्रसंस्करण उद्योगों में रोजगार और ग्रामीण क्षेत्रों में आय में वृद्धि लाने की भारी क्षमता है। इसलिए इनको भरपूर समर्थन मिलना चाहिए। उन्होंने कहा कि कृषि की केन्द्रीय भूमिका को जो अर्थव्यवस्था स्वीकार नहीं करती वह न तो व्यापक आधार वाली बन सकेगी और न ही न्यायसंगत विकास को पोषित कर पायेगी। नयी आर्थिक नीति में इसलिए कृषि, कृषि प्रसंस्करण व ग्रामीण विकास को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है।

नये बजट में ग्रामीण विकास कार्यों के लिए अगले वित्त वर्ष में 62 प्रतिशत यानी दो तिहाई अधिक राशि रखी गयी है। इस वर्ष इन कार्यों पर पिछले वर्ष से पांच सौ करोड़ रुपए अधिक अर्थात् 5,010 करोड़ रुपए खर्च किये जाएंगे। कृषि क्षेत्र के आबंटन में 36 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है। इसके साथ ही कृषि क्षेत्र में इस्तेमाल होने वाले अनेक सामानों के आयात शुल्क में कमी की गयी है। इससे विशेष कर खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र को लाभ होगा व ग्रामीण क्षेत्रों में पूंजी निर्माण के साथ-साथ रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे।

ग्रामीण विकास

ग्रामीण विकास के अंतर्गत जवाहर योजना के लिए राशि बढ़ाकर अब 3,306 करोड़ रुपए कर दी गयी है। जबकि 1992-93 में इसके लिए 2,046 करोड़ रुपए खर्च करने का प्रावधान था। प्रावधान में इस वृद्धि से वर्ष 1993-94 में एक अरब 10 करोड़ श्रमदिवसों के बराबर रोजगार उपलब्ध हो सकेगा। इसके अलावा स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं के प्रशिक्षण कार्यक्रम ट्राइसेम के अन्तर्गत साढ़े तीन लाख युवाओं को विभिन्न कार्यों का प्रशिक्षण दिया जा सकेगा। ग्रामीण जलपूर्ति योजनाओं के लिए 740 करोड़ रखे गये हैं जबकि वर्ष 1992-93 में 460 करोड़ रुपए के खर्च का प्रावधान था। त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम देश में दूसरी सबसे बड़ी ग्रामीण विकास योजना है और इस पर वर्ष 1992 में खर्च इससे पिछले वर्ष की तुलना में 40 प्रतिशत कम हुआ था। सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण कार्यों पर प्रावधान 275 करोड़ रुपए का किया गया है जबकि पिछला खर्च केवल 206 करोड़ रुपए का था।

वित्त मंत्री ने कहा कि ग्रामीण विकास के लिए कृषि ऋण एक महत्वपूर्ण निविष्टि है। नए बजट में अनुमान के अनुसार संस्थागत स्रोतों से ग्रामीण ऋण के प्रवाह में 1993-94 में बीस प्रतिशत वृद्धि होकर उसके 16,500 करोड़ रुपए तक पहुंच जाने की संभावना है जबकि वर्ष 1992-93 में यह राशि 13,800 करोड़ रुपए थी। नाबार्ड (राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक) की निवेश पुनर्वित्त सहायता में 22 प्रतिशत की वृद्धि होने से यह

1992 में 2,300 करोड़ रुपए की तुलना में वर्ष 1993 में बढ़कर 2,800 करोड़ रुपए हो जायेगी। नाबार्ड ने प्राथमिकता वाले क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देने के लिए नए एकमुश्त उपाय किए हैं। लघु सिंचाई के लिए सावधि ऋणों से पौने चार लाख कुंओं की खुदाई और 6 लाख पम्प सैट लगाने में सहायता मिलेगी। नाबार्ड 125 करोड़ रुपए के परिव्यय से देश के पांच जिलों में ग्रामीण उद्योग के सघन विकास के लिए प्रायोगिक परियोजनाएं भी आरंभ करेगा। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए भी अधिक आबंटन किया गया है।

शिक्षा व स्वास्थ्य

नए बजट में शिक्षा परिव्यय की राशि में 37.6 प्रतिशत व स्वास्थ्य के क्षेत्र में परिव्यय राशि में 60 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है। शिक्षा पर 1993-94 में 1,310 करोड़ रुपए व स्वास्थ्य सेवाओं पर 483 करोड़ रुपए खर्च किए जायेंगे। वर्ष 1992-93 में यह प्रावधान क्रमश: 952 करोड़ व 302 करोड़ रुपए के थे। वित्त मंत्री के अनुसार शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े जिलों में प्रारंभिक शिक्षा में सुधार के लिए एक नई योजना लागू की जा रही है। यह उन स्थानों पर चलायी जायेगी जहां समग्र साक्षरता अभियान सफल रहे हैं और उनके फलस्वरूप शिक्षा की मांग बढ़ी है। नए वित्त वर्ष की योजना में शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े लगभग 200 जिलों में से वे 20-25 जिले लिए जा रहे हैं जहां महिला साक्षरता औसत राष्ट्रीय औसत से कम है। वित्त मंत्री ने आशा प्रकट की है कि नए वित्त वर्ष में अधिक परिव्यय के प्रावधान से प्राथमिक शिक्षा का स्तर संतोषजनक होगा तथा विशेषकर बालिकाओं व स्त्रियों के लिए शिक्षा की व्यापक व्यवस्था हो जायेगी। प्राथमिक शिक्षा पर भी इस बार पहले के करीब 340 करोड़ की तुलना में 443 करोड़ रुपए खर्च किए जायेंगे।

स्वास्थ्य सेवाओं के प्रावधान के बारे में उन्होंने कहा कि प्रसव के दौरान होने वाली मातृ मृत्यु दर में कमी लाने के लिए सामाजिक सुरक्षा योजना के अंतर्गत पिछड़े हुए 90 जिलों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के आधारभूत ढांचे को मजबूत बनाया जायेगा। उन्होंने बताया कि संक्रामक रोगों व अन्य रोगों पर नियंत्रण के लिए चलाये जा रहे राष्ट्रीय कार्यक्रमों पर भी इस वर्ष अधिक धनराशि खर्च की जायेगी। परिवार कल्याण कार्यक्रमों को गति प्रदान करने के लिए वर्ष 1993 में 1,270 करोड़ रुपए खर्च किए जायेंगे जबकि 1992 के वर्ष में एक हजार करोड़ रुपए खर्च करने का प्रावधान था।

कृषि क्षेत्र को प्रोत्साहन

वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में यह बात कई बार दोहराई कि कृषि क्षेत्र को हर तरह का प्रोत्साहन दिया जायेगा। उन्होंने कहा कि कृषि उत्पादन को प्रोत्साहन देने व इसे लाभकारी बनाने का एक प्रमुख तरीका यह है कि किसानों को लाभकारी मूल्य सुनिश्चित हों। किसानों को कृषि सामग्री की लागत में हुई वृद्धि की प्रतिपूर्ति के लिए पिछली खरीफ फसल व आगामी रबी फसल के लिए खरीद मूल्यों में काफी वृद्धि की गयी है। सरकार की यह भी नीति है कि देश के भीतर कृषि उत्पादों के आवागमन पर प्रशासनिक प्रबंध न लगाए जायें ताकि किसानों को घरेलू मंडी में उपलब्ध मूल्यों का लाभ अवश्य मिल सके। सरकार कृषि को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र मानती है। कृषि मंत्रालय की योजनाओं जिनमें पशुपालन व डेरी कारोबार भी शामिल हैं, के लिए 1,918 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया है। यह राशि पिछले योजना प्रावधान 1,408 करोड़ रूपए से 36 प्रतिशत अधिक है।

विशेष रियायतें

वित्त मंत्री ने कहा कि आर्थिक विकास में कृषि के महत्व को देखते हुए यह आवश्यक है कि इस क्षेत्र के आधुनिकीकरण व विविधीकरण के लिए इसे विशेष रियायतें व प्रोत्साहन दिया जाये। इस संबंध में उन्होंने कृषि, बागवानी, वानिकी, मुर्गीपालन के काम आने वाले विभिन्न उपकरणों पर आयात शुल्क 55 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया है। इसके अलावा 1800 सी सी से अधिक इंजन क्षमता वाले ट्रैक्टरों व ट्रेलरों पर उत्पादन शुल्क घटाकर दस व पन्द्रह प्रतिशत कर दिया गया है। चावल के ट्रांसप्लाटंरों, ग्रैंड पेरेट मुर्गीपालन स्टाक पर भी आयात शुल्क काफी घटा दिया गया है। मछली पकड़ने के काम आने वाली आउट बोर्ड मोटरों का आयात शुल्क 40 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया गया है। कुछ कीटनाशकों पर भी आयात शुल्क घटा दिया गया है।

वित्त मंत्री ने दैनिक उपभोग के अनेक सामानों जैसे रेडियो सेट, दंत मंजन, बिजली के पंखे, बिजली के अन्य सामान, शुष्क सैल बैटरी, बिस्कुट, सांचे वाले प्लास्टिक से बनी अटैची और वनस्पति को भी उत्पाद शुल्क में राहत देकर सस्ता कर दिया है। काफी और चाय को पूरी तरह उत्पाद शुल्क से मुक्त कर दिया गया है। यही सुविधा खादी ग्रामोद्योग व एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत नकद राशि की सहायता से चलायी जा रही

इकाइयों में निर्मित जूतों को दी गयी है। सभी तरह के माचिस उद्योगों, जिनमें कुटीर उद्योग भी शामिल हैं, पर भी उत्पाद शुल्क घटा दिया गया है। कुटीर उद्योग की वर्तमान रियायतें केवल उन्हीं इकाइयों तक सीमित रखने का प्रस्ताव है जो पंजीकृत सहकारी समितियां हों अथवा खादी ग्रामोद्योग आयोग या फिर राज्य खादी व ग्रामोद्योग बोर्ड से मान्यता प्राप्त हों।

नए वर्ष के बजट में सरकार का देश की अर्थव्यवस्था का कायाकल्प करके उसे गतिशील बनाने और विशेषकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुधार और विकास में सहायता देने के संकल्प का स्पष्ट संकेत है। वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में इस बात पर बल दिया कि भारत को विश्व अर्थव्यवस्था में प्रमुख स्थान बनाना है। इसके लिए गरीबों तथा सुविधाहीनों के लिए गहरी तथा निरंतर चिंता करने वाली एक गतिशील व तेजी से विस्तार करने वाली अर्थव्यवस्था बनानी होगी तभी मजबूत व न्यायोचित समाज का निर्माण संभव हो सकेगा। नया बजट इसी दिशा में एक ठोस कदम है।

43, मैत्रेयी अपार्टमेंट्स,
ए-3, पश्चिम विहार,
नई दिल्ली-110063

सफलता की कहानी

नई राह

किशन रतनानी

बंधा गांव का मूलचंद रेगर आज बहुत खुश है। खुशी का कारण है वह परिवर्तन जो उसकी जिंदगी में आया। उसे नई राह मिल गई।

बंधा गांव कोटा जिले की लाडपुरा पंचायत समिति का एक ऐसा गांव है जो कोटा रावत भाटा रोड पर मुख्य मार्ग से काफी अंतरंग में बसा हुआ है। इस क्षेत्र में कार्यरत एक स्वयंसेवी संस्था ग्रामीण विकास एवं युवक प्रशिक्षण संस्थान के संयोजक जम्बू कुमार जैन ने मुझे बताया कि आज से चार साल पहले मूलचंद कच्ची शराब बनाने का अवैध धंधा करता था।

शराब के इस धंधे में न उसका भला था, न समाज का। उसकी जिन्दगी घिसट रही थी। इसी दौरान पुलिस ने उसे अवैध शराब बनाने के जुर्म में जेल भेज दिया। जेल से छूटा तो फिर वही पुरानी लत साथ रही।

उसकी भटकती जिंदगी को फिर एकाएक सहारा मिला। उसके सामने प्रस्ताव रखा गया एक नयी जिंदगी जीने का। उसे कहा गया कि अगर वह गांव में किराने की दुकान खोल ले तो उसे संस्था भी मदद करेगी और सरकार भी। बात उसकी समझ में आ गई। अपनी करनी और करतूतों से तंग तो वह था ही।

दो हजार रुपए का बिना ब्याज का ऋण उसे मिला और उसने जून 91 में किराने की दुकान लगा ली। दुकान चल पड़ी तो उसकी सोच भी बदला, समझ भी। किराने की दुकान के साथ-साथ उसने छोटे स्तर पर मुर्गी पालन भी शुरू कर दिया। इस काम के लिए उसे पंचायत समिति लाडपुरा से पांच हजार का अनुदान भी मिला। जिंदगी संभलने लगी उसकी।

जब उसकी आदतें बदलने लगीं तो उसकी पत्नी ने भी उसका सहयोग देना शुरू किया। संस्था तथा सरकार की मदद से उसकी पत्नी ने "ट्राइसेम" योजना के तहत सिलाई प्रशिक्षण प्राप्त किया। चूंकि यह परिवार पिछड़ी जाति का है सो उसे अनुदान में विशेष छूट भी मिली। आज दोनों मिलकर एक खुशहाल परिवार की जिंदगी बसर कर रहे हैं। पत्नी मनभर को सिलाई का छोटा-मोटा काम मिल जाता है।

कल जिसे सबक मिला था आज वह मिसाल बनने की ओर मुखर हो गया है। आज मूलचंद व उसकी पत्नी दोनों स्वयंसेवी संस्था के सक्रिय कार्यकर्ता हैं तथा अपनी रोजी रोटी कमाने के साथ-साथ समाज सेवा का काम भी करने लगे हैं। जो उन्हें मिला उसे बांटने का प्रयास कर रहे हैं। उन्होंने एक नई राह पा ली है।

क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी,
भारत सरकार,
स्टेशन रोड, कोटा-324002

विकासोन्मुखी ग्रामीण बजट

डॉ. हरिश्चन्द्र मालवीय

सत्ताइस फरवरी 1993 को संसद में प्रस्तुत वर्ष 1993-94 के 4,314 करोड़ रुपए के घाटे के बजट में रुपए को पूर्ण परिवर्तनीय करते हुए परम्परा से हटकर राहत प्रदान करने की कोशिश की गयी है। उपभोक्ता वस्तुओं में 4,522 करोड़ रुपए की कर रियायतों और आधारभूत क्षेत्र के लिये योजना आबंटन बढ़ाने की घोषणा से नये बजट में आर्थिक एवं सामाजिक विकास को राष्ट्रीय कार्य में शामिल करते हुए अर्थव्यवस्था के निजीकरण की दिशा में नयी पहल के साथ विश्व के कदम से कदम मिलाकर चलने के लिए सार्थक कदम उठाया गया है। नया बहुआयामी बजट मूलतः राजनीतिक उलझाव से दूर तथा समाज के सभी वर्गों को राहत प्रदान करने वाला है। बैंक ऋण तथा जमा राशियों पर ब्याज की दर एक प्रतिशत घटा दी गयी है। नये बजट में ग्रामीण विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य और कृषि के योजना खर्च में 36 से 62 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है। कृषि उपकरणों और मशीनों के आयात, होम्योपैथी दवाइयों तथा चिकित्सा उपकरणों पर आयात शुल्क में भारी कमी की गयी है। वित्त मंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने अपने बजट भाषण में ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देते हुए ग्रामीणों के लिए निम्न सुविधायें मुहैया कराने का प्रस्ताव किया है:

क) जवाहर रोजगार योजना के लिये आबंटन की राशि 2,046 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 3,306 करोड़ रुपए की गई है। जवाहर रोजगार योजना का उद्देश्य 11 हजार लाख श्रम दिवस के बराबर रोजगार उपलब्ध कराना है।

ख) ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के लिये प्रावधान की राशि को चालू 460 करोड़ रुपए से बढ़ाकर आगामी वर्ष के लिये 740 करोड़ रुपए किया गया है।

ग) खाद्य सबसिडी 3,000 करोड़ रुपए।

घ) उर्वरक सबसिडी 3,500 करोड़ रुपए।

च) दलित वर्गों के पुर्नवास के लिये 73 करोड़ रुपए।

छ) स्वास्थ्य पर 483 करोड़ रुपए।

ज) शिक्षा पर 32 प्रतिशत की वृद्धि।

झ) ग्रामीणों को परिवार कल्याण हेतु प्रोत्साहित करने हेतु बजट में 1,270 करोड़ रुपए।

ग्रामीण विकास

भारतीय ग्रामीण परिदृश्य में विज्ञान तथा तकनीकी के अनुप्रयोग के परिणामस्वरूप व्यापक रूपान्तरण हुआ है। ग्राम क्षेत्र में आधुनिकीकरण को बजट में प्राथमिकता दी गई है। नये बजट में ग्राम के संतुलित एवं समन्वित विकास पर बल दिया गया है। नये प्रस्तावों में ग्रामीण विकास, शिक्षा एवं कृषि के योजना खर्च में 36 से 62 प्रतिशत की वृद्धि की गई है तथा ग्रामीण विकास का परिव्यय 5010 करोड़ रुपए कर दिया गया है। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अनेकानेक न्यून आय वर्ग के लोगों के जीवन-स्तर में सुधार करने और उनके विकास क्रम को आत्मपोषित करने पर बजट में विशेष बल दिया गया है।

ग्रामीण रोजगार

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु प्रभावशाली योजनायें शुरू की गई हैं। इस उद्देश्य से गांवों में बेरोजगार लोगों के लिये आमदनी को स्थायी करना है। जवाहर रोजगार योजना में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लोगों को प्राथमिकता दी जाती है। महिलाओं के लिये इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 20 प्रतिशत स्थान आरक्षित हैं। वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में 1993-94 के बजट में जवाहर रोजगार योजना के लिये 3,306 करोड़ रुपए का आबंटन किया है। इसके जरिये लगभग 11 हजार लाख श्रम दिवस के बराबर रोजगार उपलब्ध कराना है।

उर्वरक एवं खाद्य सबसिडी

वित्त मंत्री ने 1993-94 के बजट में उर्वरकों पर 3,500 करोड़ रुपए की सबसिडी की व्यवस्था की है तथा खाद्य सबसिडी 3,000 करोड़ रुपए की है। इस प्रकार की सरकारी सहायता (सबसिडी) का मुख्य उद्देश्य कृषकों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करना है। कृषि उत्पादन में गुणोत्तर वृद्धि के लिये वैज्ञानिक तकनीक एवं उर्वरकों की अत्यन्त आवश्यकता होती है। भारतीय कृषक ज्यादातर निर्धन हैं तथा आवश्यकतानुसार उर्वरकों एवं अन्य आवश्यक वस्तुओं को खरीद नहीं सकते। अतः कृषकों को उचित मूल्य पर उर्वरक दिलाने हेतु सरकार द्वारा इस प्रकार की सबसिडी देना आवश्यक है।

पेय जल की आपूर्ति एवं सफाई व्यवस्था

गांवों में पीने के पानी की व्यवस्था और सफाई के लिये बजट में 740 करोड़ रुपए रखे गये हैं। यह राशि पिछले ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम से 280 करोड़ रुपए अधिक है। ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के तहत गांवों में जीवन स्तर में सुधार के लिये शौचालयों के निर्माण के लिए सहायता दी जाती है। सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति एवं पुर्नवास के लिये 73 करोड़ की राशि रखी गई है। इसके साथ-साथ अनुसूचित जाति एवं जनजाति से संबंधित संघटक योजना के लिये विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में 247 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया है।

परिवार कल्याण

परिवार कल्याण कार्यक्रम के लिये योजना व्यय 1,000 करोड़ से बढ़ाकर 1,270 करोड़ रुपए कर दिया गया है। देश में लगभग साढ़े पांच हजार ग्रामीण परिवार कल्याण केन्द्र चल रहे हैं। सामान्य स्तर पर व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य की देखरेख के लिये जो ग्रामीण उपकेन्द्र चल रहे हैं, उनको जारी रखने के लिये आम बजट में 302 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 483 करोड़ रुपए की राशि रखी गयी है।

महिला एवं बाल विकास

ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास योजना का उद्देश्य गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले परिवारों की महिलाओं की दशा में सुधार लाना है। इसके लिये उनकी आमदनी बढ़ाने पर ज़ोर दिया जाता है। योजना के अन्तर्गत महिलाओं के प्रशिक्षण और उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के साथ-साथ साक्षरता, स्वास्थ्य और बच्चों की देख-रेख आदि पर ध्यान दिया जाता है। इसी प्रकार बाल विकास कार्यक्रम के लिए भी आबंटित राशि में वृद्धि करके इसके लिए 474 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया।

फसल के वसूली मूल्य में वृद्धि

वित्त मंत्री डॉ मनमोहन सिंह के अनुसार खरीफ और आगामी रबी फसल के लिये वसूली मूल्यों में उल्लेखनीय वृद्धि की गयी है। सरकार की यह भी नीति है कि देश के भीतर कृषि उत्पादन को कहीं लाने ले जाने पर प्रशासनिक प्रतिबन्ध न लगाया जाय। बजट के अनुसार सरकार का उद्देश्य यह है कि घरेलू बाजार में उपलब्ध मूल्यों का पूर्ण लाभ हमारे किसानों को मिलना चाहिये।

कृषि ऋण

वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में कहा कि कृषि ऋण ग्रामीण विकास के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसी उद्देश्य से संस्थागत स्रोतों से ग्रामीण ऋण की राशि को 13,800 करोड़ रुपए तक करने की योजना बनायी गयी है। इस प्रकार इसमें 20 प्रतिशत तक वृद्धि का प्रस्ताव है। राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक के माध्यम से बैंकों को मिलने वाली विशेष पुर्नवित्त सहायता में भी 22 प्रतिशत की वृद्धि होगी। इसके फलस्वरूप यह राशि 2,300 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 2,800 करोड़ रुपए कर दी गयी है।

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक 125 करोड़ रुपए के परिव्यय से पांच चुने हुए जिलों में ग्रामीण उद्योगों के सघन विकास के लिये प्रौद्योगिक परियोजनायें आरम्भ करेगा तथा गैर कृषि क्षेत्रों में नये निवेशों की सहायता देने के लिये पांच करोड़ रुपए के आरंभिक संग्रहण से एक उद्यम पूंजी निधि की स्थापना करेगा।

संक्षेप में नया बहुआयामी बजट ग्राम के समन्वित व संतुलित विकास के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। नये प्रस्ताव में ग्राम से संबंधित सभी क्षेत्रों के विकास पर पहले की अपेक्षा अधिक धनराशि रखी गई है तथा ग्रामीण विकास एवं कृषि के योजना खर्च में 62 प्रतिशत तक वृद्धि की गई है। कृषकों को दी जाने वाली खाद्य सबसिडी की राशि में वृद्धि की गई है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई व्यवस्था, पेय जल व्यवस्था और ग्रामीण रोजगार आदि सभी क्षेत्रों में नये प्रस्तावों में विशेष ध्यान दिया गया है।

कृषि आर्थिक शोध केन्द्र,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
चैथम लाइन, इलाहाबाद

बजट में ग्रामीण ऋण की व्यवस्था

आर्येंद्र उपाध्याय

कृषि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है यों भी भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहां 75 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। कृषि और ग्रामीण उद्योग ही ग्रामीण जनता के जीवन का मुख्य आधार हैं। इसीलिए कृषि के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होने के लिए केन्द्रीय बजट में किसानों को हर तरह की सुविधाएं और राहत दी जाती है। वर्ष 1993-94 के केन्द्रीय बजट में भी कृषि पर आधारित उद्योगों और कृषि उत्पादों के विकास पर जोर दिया गया है। हालांकि कृषि क्षेत्र में 1992-93 के संशोधित अनुमानों की तुलना में इस बार वृद्धि कम ही की गई है। पर नए बजट में कृषि ऋण के क्षेत्र में उदारता बरती गई है। इस बार कृषि के क्षेत्र के लिए बजट अनुमान 2436 करोड़ रुपए है। जबकि वर्ष 1992-93 का बजट अनुमान 1879 करोड़ रुपए और संशोधित बजट 2099 करोड़ रुपए था।

वर्ष 1993-94 के बजट में कृषि और ग्रामीण ऋण व्यवस्था में धन की वृद्धि की गई है। विभिन्न संस्थागत स्रोतों से ग्रामीण ऋणों में 20 प्रतिशत की वृद्धि की गई है। राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) और दूसरे विभिन्न बैंकों के सहयोग से किसानों के लिए नई ऋण व्यवस्थाएं की गई हैं। नाबार्ड कुछ चुने हुए जिलों में ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिए परियोजनाएं शुरू करेगा। किसानों को खेती के लिए उपकरण और दूसरी सुविधाएं देने की दृष्टि से कृषि उपकरणों और कीटनाशकों के आयात शुल्क में कमी कर दी गई है। इसके अलावा कृषि, बागवानी, वानिकी, मुर्गीपालन जैसे कार्यों में काम आने वाले उपकरणों पर आयात शुल्क 55 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया है। इसी तरह मछली पकड़ने के लिए काम आने वाले मोटरों का आयात शुल्क भी 40 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया गया है।

वित्त मंत्री डा. मनमोहन सिंह ने ग्रामीण ऋण के लिए नए बजट में 16,500 करोड़ रुपए का प्रावधान रखा है। जबकि पिछले बजट में यह राशि 13,800 करोड़ रुपए थी। इस प्रकार नए बजट में ग्रामीण कर्ज 20 प्रतिशत बढ़ाया गया है। बैंकों को नाबार्ड की निवेश पुनर्वित सहायता में 22 प्रतिशत की वृद्धि की गई है। नए बजट के अनुसार नाबार्ड पांच चुने हुए जिलों में ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिए 125 करोड़ रुपए की पांच परियोजनाएं शुरू करेगा। नए बजट में कृषि उत्पादन बढ़ाने के लक्ष्य को हासिल करने के लिए राज्य सरकारों को भी अल्पावधि के कर्ज देने की व्यवस्था की गई है।

नए बजट में कृषि व ग्रामीण विकास के लिए मछली पालन और डेरी विकास योजनाओं पर खासतौर से जोर दिया गया है। मछली पालन को बढ़ावा देने व उन्नत बनाने के लिए बजट में 116 करोड़ रुपए का प्रावधान रखा गया है। जबकि पिछले बजट में यह राशि सिर्फ 79 करोड़ रुपए ही थी। इसी तरह डेरी विकास के लिए बजट में 100 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 258 करोड़ रुपए का प्रावधान कर दिया गया है। बजट में ग्रामीण विकास के दूसरे क्षेत्रों को भी प्रमुखता दी गई है। इसमें पीने के साफ पानी, स्वच्छता, जिला ग्रामीण विकास एंजेसियों को आर्थिक सहायता, स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवकों को प्रशिक्षण, मरूस्थलीय क्षेत्रों का विकास, जवाहर रोजगार योजना, भूमि सुधार, ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं व बच्चों का विकास आदि कार्यक्रम प्रमुख हैं।

कृषि और ग्रामीण विकास में नाबार्ड की भूमिका

समन्वित ग्रामीण विकास और ग्रामीणों को रोजगार दिलाने के लिए नाबार्ड ने अपनी ऋण व्यवस्था को मजबूत किया है और उसका विस्तार किया है। नाबार्ड ने स्थापना से अब तक कृषि और ग्रामीण विकास के महत्व की कई अनुसंधान परियोजनाओं और विकास कार्यक्रमों को वित्तीय मंजूरी दी है। इनमें प्रमुख योजनाएं और कार्यक्रम इस प्रकार हैं - राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला पुणे में चल रही टिश्यू कल्चर द्वारा वानिकी प्रजातियों को बढ़ाने का काम, भारतीय इलायची अनुसंधान संस्थान, इदुक्की में इलायची की जड़ सूंडी के बारे में अध्ययन, केन्द्रीय मत्स्य शिक्षा संस्थान, बंबई में बड़ी झींगा मछलियों पर परियोजना, यशवंत राव चव्हाण महाराष्ट्र ओपन यूनिवर्सिटी, नासिक में किसानों में फसल तकनीकी के प्रचार कार्यक्रम, सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट आफ फ्रेशवाटर एक्वाकल्चर, भुवनेश्वर में औद्योगिक मछली पालन हेतु बहते जल में मछली पालन प्रणाली का विकास और कोचीन के केन्द्रीय समुद्री मत्स्यपालन अनुसंधान संस्थान में शुक्ति पालन पर परियोजना।

शेष पृष्ठ 22 पर

भूमि सुधार : एक सिंहावलोकन

✍ रामजी प्रसाद सिंह

भारत एक कृषि प्रधान देश है। इसके सकल घरेलू उत्पादन का 30 प्रतिशत भाग कृषि क्षेत्र से आता है। देश की दो तिहाई आबादी कृषि पर निर्भर करती है। कृषि पर आधारित उद्योग देश की व्यवस्था की रीढ़ हैं। अत: भूमि सुधार को प्राथमिकता देना स्वाभाविक है। देश में निर्धनता और बेरोजगारी के उन्मूलन के लिए कृषि विकास जरूरी है। स्वभावत: हमारे योजनाकारों ने प्रथम पंचवर्षीय योजना काल से लेकर आज तक भूमि सुधार पर अधिक बल दिया है। भूमि सुधार के तहत अब तक खेत मजदूरों को जमीन पर मालिकी हक देने के कार्यक्रम पर अधिक ध्यान दिया जाता रहा है। परन्तु वितरण के लिए कोई खास जमीन सुलभ होने की संभावना नहीं है। अत: हमारे योजनाकारों को अधिक ध्यान भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने, पर्यावरण में सुधार लाने, अधिकाधिक जमीन को सिंचाई का जल सुलभ करने, उन्नत बीज का प्रयोग बढ़ाने, वैज्ञानिक खेती को बढ़ावा देने, कृषकों एवं खेत मजदूरों की उत्पादकता बढ़ाने तथा उनकी आय के लिए अतिरिक्त/सहायक साधन जुटाने की आवश्यकता है।

निर्धन किसानों और खेत मजदूरों को ऋण सुलभ करने में कठिनाइयों को दूर करने तथा ऋण स्वीकृति के नियमों को सरल बनाने की जरूरत है। बैंक और विकास कार्यालय के बीच चक्कर लगाने से उन्हें बचाया जाये।

भूमि सुधार की जब कभी चर्चा होती है – जमीन के बटवारे और जमीन पर जोतने वाले के अधिकार तक सिमट कर रह जाती है। विभिन्न हितों को इसके कारण लाभ जो हो, अब भूमिहीनों को कुछ मिलने की आशा नहीं है, क्योंकि जो भी जमीन भूमिहदबंदी कानून के तहत उपलब्ध हो सकती थी, वे या तो पहले ही हटा दी गयी अथवा कानूनी सलाह लेकर हदबंदी कानून के परे कर दी गयी। कुछ जमीन को बागान की जमीन बता दिया गया तो कुछ को कारखाने की, कुछ को धार्मिक ट्रस्टों की, तो कुछ को देवी-देवताओं की। कुछ भूखंड कम्पनी कानून के तहत नामी और बेनामी असंख्य साझीदारों के नाम दर्ज करा दिये गये। भूमिहीन मजदूर, विशेषकर खेत-मजदूर जमीन मालिक बनने का स्वप्न देखते रहे।

ऐसा इसलिए हुआ कि भूमिहदबंदी कानून को बनाने से पहले, उसका व्यापक प्रचार हो गया। नतीजा, सभी बड़े जमींदार सजग हो गये।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहां स्वराज होने तक औद्योगिक विकास की नींव भी नहीं पड़ी थी, कृषि-विकास को प्राथमिकता देना स्वाभाविक था। इसके लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1931 के कराची महाधिवेशन और पांच वर्ष बाद फैजपुर महाधिवेशन में ही घाटे की खेती करने वाले काश्तकारों को राहत देने और खेत मजदूरों की दुर्दशा में सुधार की आवश्यकता पर बल दिया था।

कृषि नीति

पंडित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में 1936 में संघटित राष्ट्रीय योजना कमेटी ने जोरदार सिफारिश की कि सरकार और किसानों के बीच के बिचौलियों को हटा कर किसानों का शोषण बंद किया जाए, सार्वजनिक जमीन पर सामूहिक खेती का प्रबन्ध हो और छोटे-छोटे काश्तकारों की सहकारी समिति बनायी जाये। साथ ही, छोटे काश्तकारों से, जहां नाम-मात्र की मालगुजारी ली जाए वहां बड़े किसानों से, आय के अनुपात में अधिक मालगुजारी वसूल की जाये। स्वराज के बाद प्रधान मंत्री का पद संभालने पर भी पंडित नेहरू ने इसी आशय की नीति की घोषणा की।

कुमारप्पा समिति : सन् 1948 में कांग्रेस के कार्यकारी अध्यक्ष की हैसियत से डा. राजेन्द्र प्रसाद ने प्रख्यात गांधीवादी नेता श्री जे.सी कुमारप्पा के नेतृत्व में भूमि सुधार पर एक समिति बना दी थी। उसने किसानों के आत्म-सम्मान के लिए जमींदारों, जागीरदारों, इनामदारों तथा तरह तरह के अन्य बिचौलियों को हटाये जाने के अलावा जोत की हदबंदी, चकबन्दी तथा भूमि और

जल प्रबन्ध पर जोर दिया। समिति ने बटाईदारों की बेदखली बंद करने तथा जोत पर उनका हक दर्ज किये जाने पर बल दिया। समिति ने कहा कि विधवा, अपंग, बीमार और अवयस्क के सिवाय किसी को भी बटाईदार को बेदखल करने का हक नहीं होना चाहिए।

भारत सरकार ने इस रिपोर्ट को सिद्धान्त रूप से स्वीकार कर लिया और सभी राज्य सरकारों को इस पर अमल करने की हिदायत दी। इसके अनुसार प्राय: सभी राज्य सरकारों ने जमींदारी, जागीरदारी, रैयतवारी और ताल्लुकेदारी प्रथा को समाप्त करने के लिए कानून बनाया।

इन कानूनों को संवैधानिक चुनौती दी जाने लगी तो प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने, उन कानूनों को अदालत के अधिकार क्षेत्र से परे करने के लिए संविधान के लागू होने से पूर्व, प्रथम संविधान संशोधन अधिनियम पारित कराया। इसके द्वारा सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के उद्देश्य से बनाये गये कानूनों को संरक्षण देनेके लिए संविधान में नौंवी अनुसूची का प्रावधान कराया गया।

किसान आन्दोलन

संविधान के इस प्रथम संशोधन का लाभ उठाकर लगभग सभी राज्यों ने बिचौलियों को समाप्त कर, किसानों को जमीन पर मालिकी हक प्रदान किया।

यहां इस बात का उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि इसका श्रेय सिर्फ कांग्रेस और सरकार को नहीं जाता, जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के लिए स्वयं किसान संगठनों ने भी व्यापक आन्दोलन किया था। इनमें बिहार, उत्तर प्रदेश, हैदराबाद, बम्बई, गुजरात और मध्य प्रदेश के किसान अग्रणी थे। चौथे दशक में स्वामी सहजानन्द सरस्वती के नेतृत्व में किसानों का अखिल भारतीय संगठन काफी लोकप्रिय हो गया था। इससे पहले पूर्वी उत्तर बिहार में आन्दोलनरत किसानों को महात्मा गांधी और पूर्वी उत्तर प्रदेश के किसानों को पंडित जवाहर लाल नेहरू का सानिध्य और सम्बल प्राप्त हो चुका था। इसके कारण जमींदारी प्रथा की नींव हिल चुकी थी।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56)

स्वभावत: प्रथम पचंवर्षीय योजना के प्रारूप में जमींदारी प्रथा के उन्मूलन को भूमि सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि बताया गया तथा कृषि उत्पादन को इष्टतम स्तर पर पहुंचाने का संकल्प व्यक्त किया गया।

यह लक्ष्य निर्धारित किया गया कि कृषि अर्थ-व्यवस्था का विविधीकरण किया जाए, कृषि प्रबन्ध की कुशलता बढ़ाई जाए, भूमि-नीति निर्धारित की जाए, ग्रामीणों की सम्पत्ति और आय में विषमता दूर की जाए, खेत मजदूरों और रैयतों का शोषण बंद किया जाए। ग्रामीणों को अवसर की समानता सुनिश्चित की जाए, खेती की जमीन रखने की सीमा निर्धारित की जाए और छोटे किसानों, बटाईदारों तथा खेत मजदूरों की सहायता का प्रबंध किया जाए।

साथ-साथ, सहकारी खेती को बढ़ावा देने, भूखंडों के टुकड़े-टुकड़े होने से बचाने, चकबंदी करने, सीमान्त किसानों को मिल जुलकर खेती करने के लिए सहायता देने, भूखंडों का अभिलेख तैयार करने, बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने और किसानों को प्राथमिकता के आधार पर ऋण, उर्वरक, बीज आदि सुलभ करने तथा तकनीकी सहायता देने का लक्ष्य बनाया गया।

थोड़ा-बहुत हेर-फेर के साथ, बाद की सभी पंचवर्षीय योजनाओं में इसी लक्ष्य को दोहराया गया। किन्तु चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, प्रोफेसर एन.जी. रंगा और श्री मीनू मसानी जैसे नेताओं के प्रबल विरोध के कारण, सरकार को सहकारी खेती का कार्यक्रम छोड़ना पड़ा।

दूसरी योजना (1956-61)

अलबत्ता दूसरी योजना में भूमिहीन-खेत-मजदूरों को सामाजिक प्रतिष्ठा देने तथा जमींदारों द्वारा खुद से काश्त किये जाने के कारण जमीन से बेदखल काश्तकारों/बटाईदारों के पुर्नवास के लिए प्रत्येक राज्य में एक-एक बोर्ड बनाने का संकल्प किया गया।

अधिकतम जोत सीमा निर्धारित करने में कई राज्य सरकारों को विलम्ब हुआ तथा भूस्वामियों को कई प्रकार की छूट देनी पड़ी। धारणा यह बन गयी कि कृषि-उत्पादन तभी बढ़ेगा, जबकि खेती में पूंजी लगायी जायेगी और पूंजी लगाने की स्थिति में केवल बड़े किसान हैं। इसलिए कई राज्यों में अधिकतम जोत की सीमा 60 एकड़ कर दी गयी।

चकबंदी में भी अपेक्षित प्रगति नहीं हुई, क्योंकि किसानों की सहमति के बिना चकबंदी नहीं की जा सकती थी। स्वभावत: भूखंडों की छोटी-छोटी टुकड़ियां घटने के बजाय, आबादी में वृद्धि के अनुरूप बढ़ती गयीं।

तीसरी योजना (1961-66)

तीसरी पंचवर्षीय योजना में समाजवादी समाज की स्थापना की ललक थी। अत: काश्तकारों को सामाजिक न्याय देने तथा किसानों को लाभकारी मूल्य सुलभ करने का लक्ष्य बनाया गया। इसके लिए सिंचाई और विद्युत-आपूर्ति की अनेक परियोजनाएं कार्यान्वित की गयीं किन्तु सामाजिक न्याय दिलाने का लक्ष्य, भूमि-सीमा कानून के कार्यान्वयन तक सीमित रहा।

चौथी योजना (1969-74)

चौथी योजना काल में समाजवादी समाज की स्थापना का चरण लक्ष्य निर्धारित किया। इसके कारण सत्तारूढ़ कांग्रेस विभाजित हो गयी। श्रीमती इन्दिरा गांधी लोक सभा में अल्पमत में आ गयी। अत: वामपंथी दलों का सहयोग लेने की गरज से, उन्होने संविधान की प्रस्तावना में संशोधन कर भारत को धर्मनिरपेक्ष समाजवादी गणतंत्र घोषित किया।

स्वभावत: चौथी योजना में भूमि-सुधार को उच्च प्राथमिकता दी गयी और जोत सीमा में व्यापक कटौती तथा विभिन्न संस्थाओं को प्राप्त छूट को समाप्त करने का निर्णय किया गया।

इस विषय पर दो बार मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन बुलाये गये, जिसमें तय किया गया कि दो फसली जमीन की अधिकतम सीमा दस से अठारह एकड़, एक फसली की 27 एकड़ और अन्य जमीनों की 54 एकड़ रखी जाए।

इसके अनुसार प्राय: सभी राज्यों में भूमि-सीमा-कानूनों में संशोधन किये गये और उन्हें 24 जनवरी 1971 से लागू किया गया। इन कानूनों में निर्धारित सीमा से अधिक जमीन रखने की छूट केवल भूदान यज्ञ कमेटी, अनुसूचित बैंकों, बड़े बड़े कारखानों, कृषक सहकारी समितियों, सार्वजनिक गौशालाओं, तथा सैनिकों को दी गयी।

चीनी मिलों की भी जोत-सीमा घटायी गयी, परन्तु धार्मिक संस्थाओं को छूट देने के बारे में राज्य सरकारों को स्वतन्त्र कर दिया गया। बड़े-बड़े भूस्वामियों ने इन कानूनों को अमल में आने नहीं दिया। सरकार न बेनामी जमीन पकड़ सकी और न भूखंडों का अभिलेख तैयार कर सकी। स्वाभावत: फालतू जमीन (सरप्लस लैंड) भी ज्यादा हाथ नहीं आयी। इसके साथ ही, जिन भूखण्डों को अधिशेष घोषित कर भूमिहीनों के बीच बांट दिया गया, उन पर न्यायालयों में आपत्ति कर दी गयी। जोत-सीमा-कानूनों में संशोधन को भी संविधान की धारा-14 (समानता का अधिकार), धारा-19 (व्यवसाय और संपत्ति का अधिकार) तथा धारा-31 (बाजार-दर से मुआवजा पाने का अधिकार) के उल्लंघन के आधार पर, उच्च न्यायालयों में समादेश याचिकायें दायर की गयीं। परिवार की परिभाषा करने में मनमानी के आरोप लगाये गये। वयस्क और अवयस्क लड़कों तथा अविवाहित एवं विवाहित लड़कियों में भेद-भाव किये जाने पर आपत्ति की गयी।

कहीं भूखंडों के वर्गीकरण को चुनौती दी गयी तो कहीं मुआवजे की दर के औचित्य को। धार्मिक संस्थाओं और अल्पसंख्यकों ने आपत्ति की कि यह वैयक्तिक-कानून (परसनल लॉ) के विरुद्ध है।

जोत-सीमा कानूनों में खामियां

कृषि आयोग, 1976 की रिपोर्ट में बताया गया कि भूमि-सीमा कानूनों में अनेक कमजोरियां थीं। एक तो उनमें दुनिया भर की छूटें थीं, दूसरे भूखंडों के वर्गीकरण के बारे में कोई स्पष्ट निर्देश का अभाव था। केरल के भूमि सीमा कानून में 17 तरह की संस्थाओं को छूट थी, मध्य प्रदेश में 14, महाराष्ट्र में 11, पंजाब में 13 तो उत्तर प्रदेश में 20 संस्थाओं को छूट थी।

इसका सर्वाधिक लाभ मठाधीशों ने उठाया। देवी देवताओं के नाम पर उन्होंने हजारों एकड़ जमीन दबा ली।

अधिकांश राज्यों में जोत की सीमा अधिक रख दी गयी थी। कृषि-आयोग की रिपोर्ट के अनुसार आन्ध्र प्रदेश में जोत की सीमा 27 से 224 एकड़ थी, राजस्थान में 22 से 336 एकड़, गुजरात में 10 से132 एकड़, मैसूर में 27 से 216 एकड़ तथा पंजाब और हरियाणा में 30 से 60 एकड़ और महाराष्ट्र में 28 से126 एकड़ की सीमा थी।

इसमें भी यह सीमा प्रति परिवार पर नहीं प्रति व्यक्ति थी। इसका अर्थ यह हुआ कि आन्ध्र प्रदेश में पांच व्यक्ति का एक परिवार 1620 एकड़ महाराष्ट्र में 630 एकड़ पंजाब एवं हरियाणा में 300 एकड़ जमीन रख सकता था।

ऐसी अवस्था में खेत-मजदूरों में बांटने के लिए जमीन कहां से मिलती?

पांचवी योजना (1974-79)

इसीलिए पांचवी पंचवर्षीय योजना में जोर दिया गया कि भूमि सीमा कानून में खमियां दूर की जाएं क्योंकि भूमि के पुनर्वितरण तथा काश्तकारों को जमीन पर मालिकाना हक दिलाने की सरकार की नीति पर अमल नही हो सका। इस संदर्भ में मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन में यह सिफारिश की गयी कि भूमि जोत-

सीमा कानून के कारण उत्पन्न विवादों को, सिविल कोर्ट की परिधि से परे किया जाय और उनके निपटाने के लिए भूमि-सुधार-न्यायाधिकरणों की स्थापना की जाय। इसकी भी कई राज्यों ने उपेक्षा की।

भूमि सीमा कानूनों में सुधार के बावजूद, उनमें व्यापारिक और औद्योगिक संस्थानों या धार्मिक या शैक्षिक संस्थाओं के नाम पर जो छूट बरकरार रखी गयी थी, उसके कारण भी जमींदारों को अपनी काफी जमीन बचाने का मौका मिल गया।

मुश्किल से एक प्रतिशत जमीन फालतू (सरपलस) घोषित की गयी। उनमें भी अधिकांश बेकार और बंजर जमीन। बेनामी हस्तान्तरण के मामले पकड़े नहीं जा सके। उल्टे बटाई या ठेके पर जोतने वाले मजदूर बेदखल हो गये। बड़े-बड़े भू-स्वामियों, महंतों और कारखानों के मालिकों ने तरह तरह के हथकंडे अपना कर जमीन दबा ली अथवा मोटी रकम लेकर जमीनों को अपने चहेतों के बीच बांट दिया और न्यायालयों में यह बयान दे दिया कि अमुक व्यक्ति हमारी अमुक जमीन 12 वर्षों से जोत रहा था ताकि उन जमीनों पर टेनैंसी एक्ट के तहत उनका स्थाई कब्जा कायम रहे, वह जमीन सरकार के हाथ नहीं लगे।

नतीजा यह हुआ कि वास्तव में जमीन जोतने वाले बेदखल हो गये और दूसरे सम्पन्न लोगों को नाजायज फायदा हो गया। कुछ जमीन रखेलों को चली गयी, कुछ लठैतों को।

इस तरह भूस्वामियों और महंतों ने अपने कृपापात्रों की सेना बना ली, जिनका इस्तेमाल करके वे वास्तविक जोतदारों पर जुल्म करते हैं।

स्वभावत: गरीबी की रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाली लगभग एक-तिहाई आबादी को लाभ पहुंचाने का हमारे योजनाकारों का स्वप्न अधूरा रहा।

छठी योजना

स्वभावत: छठी योजना में कोई रणनीति बनाने के बजाय, पिछड़े तीन दशकों में कृषि विकास या भूमि-सुधार की जो योजनायें शुरू की जा चुकी थीं, उन पर कड़ाई से अमल करने का संकल्प लिया गया और गरीबी उन्मूलन के चरम लक्ष्य की दृष्टि से कृषि उत्पादन में वैविध्य लाने के प्रथम योजना के कार्यक्रम पर अमल करने का फैसला किया गया। इस तरह कृषि-उद्योग, ग्रामोद्योग, वन विकास और गरीबी की रेखा के नीचे की आबादी को, गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने का संकल्प लिया गया। संशोधित 20 सूत्री कार्यक्रम इस योजना का अभिन्न अंग बन गया। किन्तु जमीन के बंटवारे का कार्यक्रम या भूमि की चकबन्दी का कार्यक्रम ठप्प हो गया।

सातवीं योजना

इस अवधि में सभी जोतदारों या काश्तकारों को जमीन पर अस्थाई अधिकार दिलाने का लक्ष्य रखा गया परन्तु सरकार ने स्वयं स्वीकार किया है कि सन् 1981-82 तक सभी राज्यों में काश्तकारों को जमीन पर स्वामित्व देने के लिए कानून बनाने का कार्यक्रम था, परन्तु अभी तक यह समस्या बनी हुई है।

आठवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में कहा गया है कि 1972 के राष्ट्रीय मार्गदर्शन पत्र के आधार पर गोवा और कुछ पूर्वी राज्यों को छोड़कर सभी राज्यों में जोत की अधिकतम सीमा संबंधी कानून बन गये थे किन्तु अभी तक कानूनों पर पर्याप्त रूप से अमल नहीं हो सका है। फालतू घोषित 72.3 लाख एकड़ भूमि में सातवीं योजना के अंत तक 46.5 लाख एकड़ जमीन बांटी गई, करीब 26 लाख एकड़ जमीन बांटी नहीं जा सकी। चकबंदी कानून सातवीं योजना के अंत तक केवल 15 राज्यों में बनाये गये। केरल, तमिलनाडु और आंध्र में इसकी शुरूआत भी नहीं हुई है। लगभग 70 प्रतिशत खेती योग्य जमीन की सिंचाई का प्रबन्ध बाकी है। जमीन की उत्पादन क्षमता का केवल 60 प्रतिशत उपयोग किया जा सका है।

खेती के योग्य 25 प्रतिशत जमीन पर खाद्यान्न के मामले में देश आत्म निर्भर हो गया है, फिर भी उपज की दर, अन्तर्राष्ट्रीय औसत से बहुत कम भूमि बढ़ी है।

आठवीं योजना

1992-97 आठवीं योजना काल में और ऊँचा लक्ष्य रखा गया। इसमें ग्रामीण विकास पर प्रारंभ में 14,000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था परन्तु प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव के हस्तक्षेप से यह राशि 30,000 करोड़ रुपये कर दी गयी है इसी के अनुरूप भूमि सुधार के मद में आठवीं योजना काल में दुगुना खर्च अपेक्षित है।

आठवीं योजना दस्तावेज में भी प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में निर्धारित भूमि विकास नीति दोहरायी गयी है। इसमें बिचौलियों की समाप्ति, वास्तविक किसानों तथा बटाईदारों की स्थिति में सुधार, भूमि सीमा हदबंदी कानून के तहत फालतू घोषित जमीन का वितरण, चकबंदी और भूमि अभिलेखों में

सुधार शामिल है।

इसमें सरकार और किसानों के बीच के बिचौलियों, जमींदारों को समाप्त करने का काम अभी पूरा नहीं हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह कार्यक्रम शुरू हो गया था तथा 1955 तक 40 प्रतिशत भूमि पर से बिचौलियों को हटा कर उन पर किसानों को मालिकाना हक दिया गया था परन्तु उसके बाद कोई खास प्रगति नहीं हुई। इसलिए आठवीं योजना काल में भी उस कार्यक्रम को जारी रखने की नीति अपनाई गयी है।

बड़े किसान अभी भी खुद से खेती नहीं करते दूसरों से बटाई या ठेके पर खेती करवाते हैं। ऐसे बटाईदारों को खेती का साधन हल, बैल, बीज, खाद आदि हमेशा पास रखना पड़ता है। जमीन मालिक, जब इनसे एकाएक जमीन वापस ले लेता है, तो वे बेरोजगार हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में प्राय: अधिकांश राज्य सरकारों ने बटाईदारों को बटाई जोतने का स्थाई हक देने के लिए कानून बनाये हैं। किन्तु पश्चिम कर्नाटक और केरल छोड़ किसी भी राज्य में उन कानूनों को अच्छी तरह लागू नहीं किया गया है।

जून 1992 तक की सूचना के अनुसार विभिन्न राज्यों में एक करोड़ से अधिक बटाईदारों को, विभिन्न प्रकार के काश्तकारी कानूनों के तहत बटाई जोतने का स्थाई अधिकार दिया गया है अथवा जमीन मालिकों को मुआविजा देकर उन्हें मालिकी हक दिया गया है।

पश्चिम बंगाल में आपरेशन बर्गा के तहत 14 लाख बटाईदारों के नाम, भूमि अभिलेखों में दर्ज किये गये हैं। कर्नाटक में भूमि अधिकरण की स्थापना की है, जिसने करीब तीन लाख बटाईदारों का मामला निपटाया है। इसके फलस्वरूप उन्हें करीब 11 लाख एकड़ भूमि उपलब्ध हुई है। केरल में इस योजना के तहत उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

सातवीं योजना के अंत तक 19 करोड़ 94 लाख एकड़ जमीन की चकबंदी हो गई थी। कानून में अनेक कमजोरियों के कारण चक अपेक्षाकृत छोटे बने हैं। किन्तु इनका भी परिवारों में बटवारों के कारण विभाजन शुरू हो गया है।

भूमि सीमा कानून के तहत, जिन जोतदारों या खेत मजदूरों को भूखंड दिये गये हैं उन्हें प्रति हेक्टेयर 2500 रुपये की सहायता का कार्यक्रम लागू हो गया है। राज्य सरकारों को भूमि अभिलेख को ताजा करने के लिए केन्द्र द्वारा सातवीं योजना के अंत तक करीब 26 करोड़ रुपये का अनुदान किया गया है। फिर भी किसानों को अपनी जमीन की पास बुक बनाकर दिये जाने के कार्यक्रम में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है।

भारत सरकार ने सभी जिला मुख्यालयों में भूमि अभिलेखों को रखने के लिए कम्प्यूटर लगाने का निश्चय किया है। इस पर प्रति जिला 25 लाख रुपये का अनावर्ती खर्च होगा, जो केन्द्र सरकार देगी। फिलहाल 25 जिलों में उसकी शुरूआत की जा रही है इनमें मध्य प्रदेश के मौरेना और राजस्थान के डुंगरपुर में कम्प्यूटरों की स्थापना हो चुकी है और कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है।

बेरोजगारी उन्मूलन

आठवीं योजना की प्रस्तावना में इस सदी के अंत तक बेरोजगारी उन्मूलन का लक्ष्य बनाया गया है। स्वभावत: भूमि विकास और भूमि सुधार पर अधिक खर्च किया जायेगा, क्योंकि सर्वाधिक बेरोजगारी ग्रामीण क्षेत्रों में है और सर्वाधिक रोजगार सृजन किये जाने की क्षमता भी जमीन और गांवों में है।

देश में अभी भी 30 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे जीवन बसर कर रहे है। जाहिर है इस आबादी के पास काम नहीं है या नाम मात्र का काम है। इस प्रकार के गरीबों में से 80 प्रतिशत गांवों में रहते हैं। इनमें बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश जैसे बड़े राज्यों में इनकी संख्या औसत से ज्यादा है। अत: इन राज्यों में भूमि सुधार को और गति देनी होगी। इसके लिए आठवीं योजना काल में गांवों में स्थायी उत्पादक सम्पत्तियों के निर्माण तेज किये जायेंगे। इसके तहत गांवों तक सभी मौसम में काम आने वाली सड़कें बनाने, सिंचाई क्षेत्र को बढ़ाने, उबड़ खाबड़ जमीनों को समतल किये जाने, भू-क्षरण रोकने, मिट्टी की जांच तेज कर, किसानों को उपयुक्त फसल लगाने की सलाह देने, वृक्ष लगाने और व्यावसायिक प्रशिक्षण देने के कामों में तेजी लायी जाएगी। इसके साथ साथ ग्रामीण क्षेत्रों को बिजली की आपूर्ति सुनिश्चित की जायेगी।

सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह लिया गया है कि कृषकों, व्यापारियों, बैंकों, वैज्ञानिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों को सम्मिलित कर लघु कृषक एवं कृषि व्यवसाय संघ की स्थापना की जायेगी और उसे अनाज, तिलहन, कपास, गन्ना, फल, रेशम, दूध, वानिकी, मछली पालन और जल में उपजने वाली दूसरी चीजों के उत्पादन, भंडारण और क्रय-विक्रय की व्यवस्था में सुधार लाने की जिम्मेदारी सौंपी जायेगी तथा संस्थागत सुधार के

(शेष पृष्ठ 22 पर)

भूमि सुधार:कितने सार्थक, कितने कारगर

नवीन पन्त

स्वतन्त्रता आंदोलन के दिनों से ही भूमि सुधारों का मुद्दा राजनीतिक चेतना और कार्यक्रम का अभिन्न हिस्सा रहा है। अंग्रेजों ने राज्य की आमदनी बढ़ाने के लिए बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा कुछ अन्य राज्यों में जमींदारों ताल्लुकेदारों को किसानों से सरकारी लगान वसूल करने का अधिकार दिया और इसके बदले उन्हें किसानों के शोषण की खुली छूट प्रदान की। जमींदार किसानों से सरकारी लगान के अलावा अनेक तरह के अन्य कर भी वसूल करते थे। किसानों को जमीन पर स्थायी रुप से खेती नहीं करने देते थे। उनसे बेगार लेते थे और उन पर अनेक तरह से अत्याचार करते थे। राजनीतिक चेतना फैलाने के साथ किसानों ने जमींदारों की इन अनुचित ज्यादतियों का विरोध करना शुरू किया।

गांधी जी 1915 में दक्षिण अफ्रीका से स्वदेश लौटे। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के विरुद्ध भेदभाव समाप्त करने के लिए जबरदस्त संघर्ष शुरू किया। उसकी सुवास शीघ्र ही सारे देश में फैल गयी। अफ्रीका से लौटने के बाद अगले तीन वर्षों के दौरान गांधीजी गुजरात में बोरसाड, खेड़ा में सरकारी मालगुजारी में अभूतपूर्व बढ़ोतरी से त्रस्त किसानों और बिहार में साहबों से आतंकित किसानों की सहायता में लग गए। गांधीजी ने दोनों स्थानों पर स्थानीय नेताओं पर इस संघर्ष को चलाने की जिम्मेदारी डाली। बिहार में उन्होंने यह दायित्व डा. राजेन्द्र प्रसाद को और खेड़ा में सरदार वल्लभभाई पटेल को सौंपा। इस दोनों स्थानों पर अन्याय अत्याचार का विरोध करने के लिए गांधी जी संघर्ष का सीधा परिणाम यह निकला कि देश में विश्वास का नया माहौल पैदा हुआ। किसानों के लिए गांधीजी महात्मा बन गए, जो अनेक दु:ख दैन्य को समाप्त कर सकते थे। गांधीजी ने सरकार के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन की घोषणा की। इससे पहले उन्होंने देश की सामान्य जनता, दरिद्र नारायण के साथ स्वयं को पूरी तरह से मिला लेने के लिए अपना जीवन बदल दिया। लोग गांधीजी को महात्मा कहने लगे।

बीस के दशक में देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था बहुत नाजुक दौर से गुजर रही थी। किसानों पर जमींदारों के अत्याचार बढ़ रहे थे। बेदखली, बेगार, और भूमि का किराया बढ़ाया जा रहा था। किसान, बड़ी मुश्किल से दो जून की रोटी जुटा पा रहे थे लेकिन जमींदारों के कारिन्दे उनके मुंह का कौर छीनने को तैयार रहते थे। सन् 1920 तक उत्तर प्रदेश, बिहार में बड़े पैमाने पर किसान सभाओं का गठन होने लगा था। इसी वर्ष पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में अवध किसान सभा संगठित की गयी। प्रतापगढ़, रायबरेली, सुल्तानपुर और फैजाबाद में इसकी 330 शाखाएं थीं। मार्च 1921 को अवध के कुछ जिलों में किसानों ने जमींदारों-साहूकारों के अत्याचारों के विरुद्ध बड़े पैमाने पर विद्रोह किया। विद्रोह के दौरान ताल्लुकेदारों की फसल और मकान जला दिए गए, बाजार लूट लिए गए किसानों ने बनियों को आदेश दिया कि कपड़ा चार आने गज (25 पैसे गज) और अनाज एक रुपए का आठ सेर (13 पैसे का एक सेर) बेचा जाये। प्रदर्शनों के दौरान कुछ स्थानों पर भूमिहीनों को भूमि देने और लगान, किराया न देने के भी नारे लगाए गए।

इस समय देश भर में राष्ट्रीय आन्दोलन जोरों पर था। सन् 1921 की गर्मियों तक किसान आन्दोलन असहयोग आंदोलन का हिस्सा बन गया। सन् 1922 में उत्तर प्रदेश के हरदोई, बहराइच, बाराबंकी और सीतापुर जिले आंदोलन की चपेट में आ गए।

अगस्त 1936 में प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनावों के लिए घोषणापत्र और फैजपुर में कांग्रेस के अधिवेशन में स्वीकृत भूमि संबंधी कार्यक्रम में किसानों की अनेक मांगों को शामिल किया गया। कांग्रेस किसानों की पार्टी होने का दावा करती थी। उसके जनाधार गांव थे। अत: वह किसानों के हितों की उपेक्षा कैसे कर सकती थी? सन् 1936-37 में उत्तर प्रदेश और बिहार प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने जमींदारी की समाप्ति की मांग की। सन् 1937-39 के दौरान प्रान्तों में निवार्चित कांग्रेस सरकारों ने किसानों के हित के अनेक काम किए। किसानों को साहूकारों के शिकंजे से मुक्ति दिलाने के कानून पास किए गए। कांग्रेस ने प्रान्तों में किसानों के ऋण कम किए, ब्याज की अधिकतम राशि निर्धारित की गयी और जमींदारों द्वारा जमीन का किराया और लगान बढ़ाने पर अंकुश लगाया गया। प्रबंध में कानूनी काश्तकारों को मौसमी काश्तकारी की हैसियत प्रदान की गयी और बिहार में मंदी के दौरान बर्खास्त भूमि से हटाये गये रय्यतों को उनकी जमीन फिर

से दे दी गयी। बंबई में रय्यतवाड़ी किसानों के खांटी उप काश्तकारों को कुछ अधिकार प्रदान किए गए।

द्वितीय महायुद्ध की घोषणा के बाद जब वाइसराय ने ब्रिटेन के पक्ष में भारत को भी युद्ध में शामिल कर दिया तो कांग्रेस सरकारों ने इस्तीफा दे दिया। युद्ध के दौरान किसान आंदोलन लगभग शांत रहे। इस काल की महत्वपूर्ण बात यह है कि 1940 में फलाउंड कमीशन ने जमींदारों को मुआवजा देकर जमींदारी समाप्त करने का सुझाव दिया।

स्वतन्त्रता के समय अर्थव्यवस्था का स्वरूप कृषि और ग्रामीण था। देश की 85 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती थी और अपनी जीविका खेती से प्राप्त करती थी। स्वतंत्रता के साथ ही देश का प्रमुख गेहूं उत्पादन क्षेत्र पाकिस्तान में चला गया। देश में सर्वत्र खाद्यान्नों की कमी थी। स्वतंत्रता के साथ किसान भी यह अपेक्षा करने लगे कि स्वराज्य के सुप्रभाव में उनकी दशा में भी सुधार होगा। अत: स्वतंत्रता मिलने के कुछ समय बाद ही उत्तर प्रदेश, बिहार और अन्य राज्यों में कानून बनाकर जमींदारी समाप्त कर दी गयी। कानून में जमींदारी को मुआवजा देने की व्यवस्था थी। लेकिन यह मुआवजा बाजार दर पर नही था। जमींदारों की मांग थी कि उन्हें बाजार दर पर मुआवजा दिया जाये। अत: जमींदारों ने जमींदारी उन्मूलन कानून को चुनौती देने के लिए अनेक उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में याचिकाएं दायर कीं। अदालतों के आदेशों से जमींदारी उन्मूलन के कार्य में कुछ बाधा पड़ी लेकिन अन्तत: सरकार ने चौथा संविधान संशोधन अधिनियम 1955 पारित करके मुआवजे का विषय अदालतों के अधिकार क्षेत्र से बाहर कर दिया और संविधान के अनुच्छेद 31 क में संशोधन करके उसे संविधान के अनुच्छेद 14, 19, और 31 के प्रभाव से मुक्त कर दिया। 1984 में संविधान के 47 वें संशोधन अधिनियम, 1984 द्वारा 14 अन्य भूमि कानूनों को संविधान की 9वीं अनुसूची में शामिल कर दिया गया। नौवीं अनुसूची में शामिल 202 कानूनों में से 169 कानून भूमि सुधारों के बारे में है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भूमि सुधार कार्यक्रम, गरीबी हटाओ कार्यक्रम और कृषि के आधुनिकीकरण कार्यक्रम का अभिन्न हिस्सा बना गया है। भूमि सुधार कार्यक्रम में भूमि सुधारों के बारेमें निम्नलिखित हैं : जोतने वाले किसान का जमीन पर स्वामित्व, मध्यवर्ती पट्टेदारी का उन्मूलन, पट्टेदारी की सुरक्षा के लिए उसमें सुधार, लगान का विनियमन, जमीन की अधिकतम सीमा का निर्धारण, फालतू जमीन का भूमिहीनों में वितरण, चकबंदी तथा भूमि संबंधी अभिलेखों का संकलन और उन्हें अद्यतन बनाना।

पिछली पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान इस क्षेत्र में काफी काम हुआ है। देश के अधिकांश भागों में अनुपस्थित जमींदारी और मध्यवर्ती पट्टेदारी की प्रथा समाप्त कर दी गयी है। जमीन का स्वामी किसान को, जोतने वाले को बना दिया गया है। लगभग सभी राज्यों में काश्तकारों को जमीन के स्वामित्व के अधिकार दिए जा चुके हैं। जोत की अधिकतम सीमा निर्धारित की जा चुकी है और फालतू भूमि की पहचान करके उसका वितरण किया जा चुका है।

नगालैण्ड, मेघालय और मिजोरम को छोड़कर सभी राज्यों में काश्तकारी कानून लागू है। इन कानूनों में काश्तकारों को भूमि का स्वामित्व प्रदान करने, पट्टे की सुरक्षा और उचित लगान निर्धारित किए जाने की व्यवस्था है। कानूनों को लागू किए जाने के संबंध में विभिन्न राज्यों में अन्तर है। भूमि सुधार संबंधी कानूनों को लागू करने में पश्चिम बंगाल, कर्नाटक और केरल में अच्छी सफलता मिली है। पश्चिम बंगाल में आपरेशन बर्गा के अन्तर्गत 14 लाख बटाईदार दर्ज किए गए हैं। कर्नाटक में भूमि संबंधी विवादों का समाधान करने के लिए भूमि प्राधिकरणों की व्यवस्था की गयी है। इन प्राधिकरणों ने 11 लाख एकड़ भूमि से संबंधित 3 लाख काश्तकारों के बारे में निर्णय दिया है। केरल में काश्तकार संस्था के माध्यम से स्वामित्व स्वीकार दिए गए, लेकिन सुधारों के वांछित परिणाम नहीं निकले हैं क्योंकि अनौपचारिक, मौखिक या प्रच्छन्न काश्तकारों की संख्या अभी भी काफी है।

काश्तकारों को भूमि के स्वामित्व अधिकार दिलाने, जमीन के मालिक को निर्धारित मुआवजे की अदायगी पर काश्तकार की भूमि का स्वामित्व प्रदान करने, काश्त की अवधि को निश्चितता प्रदान करने और जमीन का उचित किराया निर्धारित करने के कानून देश के विभिन्न राज्यों में बनाए जा चुके हैं। इन प्रयासों से 1 करोड़ 10 लाख 42 हजार काश्तकारों को 144.29 लाख एकड़ भूमि (कुल खेती योग्य भूमि का 5 प्रतिशत) का स्वामित्व दिलाया गया है।

छठी योजना में यह घोषणा की गयी थी कि अस्सी के दशक के शुरू तक सभी राज्यों में काश्तकारों को स्वामित्व प्रदान करने के लिए कानूनी उपाय कर दिये जायेंगे। लेकिन अनेक कारणों से ऐसा अभी तक नहीं किया जा सका है। गोवा तथा पूर्वोत्तर राज्यों को छोड़कर शेष राज्यों में भूमि की अधिकतम सीमा से संबंधित कानून बना दिए गए हैं। लेकिन इन्हें सभी राज्यों में पूरी तरह और

प्रभावी ढंग से लागू नहीं किया जा सका है।

भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित करने का कानून ग्रामीण क्षेत्रों में असमानता समाप्त करने का कारगर साधन है। इसके साथ ही यह समाज के दुर्बल वर्गों को भी भूमि उपलब्ध कराता है। इस कानून के अन्तर्गत गांव में फालतू घोषित भूमि भूमिहीनों को वितरित कर दी जाती है।

पिछले वर्ष जून तक भूमि की अधिकतम सीमा कानून के अन्तर्गत 72.81 लाख एकड़ फालतू घोषित की जा चुकी थी। इसमें से 47.59 लाख एकड़ भूमि भूमिहीनों निर्धन ग्रामीणों में वितरित की जा चुकी थी। भूमि पाने वालों में 5 प्रतिशत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जातियों के थे। समान्यत: यह देखा गया है कि अधिकतम जोत कानून के अन्तर्गत फालतू घोषित अधिकांश भूमि खेती योग्य नहीं होती। भूमिहीनों निर्धन ग्रामीणों के पास, जिन्हें यह भूमि दी जाती है, उस भूमि को खेती योग्य बनाने के पर्याप्त साधन नहीं होते। अत: इस तरह की फालतू भूमि पाने वाले लोगों को केन्द्रीथ प्रायोजना के तहत 2,500 रुपए प्रति हैक्टेयर की दर से सहायता की जाती है। भूदान और सरकारी परती भूमि के उन आबंटियों को भी यह सहायता दी जाती है जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन जाति के सदस्य होते हैं। यह लाभ इन जातियों के उन सदस्यों को भी दिया जाता है जिन्हें उनकी अपनी छीनी हुई भूमि फिर दिलाई गयी है।

प्रधानंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव भूमि सुधारों के कार्यक्रम को सर्वाधिक महत्व देते हैं। अक्टूबर 1991 में मुख्य मंत्रियों के पहले सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने भूमि सुधारों को तेजी से लागू करने की आवश्यकता पर जोर दिया था। उन्होंने राज्यों को आदेश दिया कि वे 31 मार्च, 1992 तक समस्त उपलब्ध अतिरिक्त भूमि के वितरण की व्यवस्था करें। जब यह कार्य मार्च 1992 तक नहीं किया जा सका तो 14 मार्च, 1992 को राज्यों के राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन में मुकदमों से छुड़ाई गयी अतिरिक्त भूमि के वितरण की आखिरी तारीख बढ़ाकर 30 जून, 1992 कर दी गयी।

इस सम्मेलन में यह भी निर्णय लिया गया कि मुकदमेबाजी में फंसी 75 प्रतिशत भूमि भी सितम्बर 1992 तक वितरित कर दी जाये। सम्मेलन के बाद प्रधानमंत्री और ग्रामीण विकास राज्य मंत्री ने राज्य सरकारों को पत्र लिखकर उनसे राजस्व मंत्रियों के सम्मेलन में लिए फैसलों को जल्दी से जल्दी कार्यान्वित करने का अनुरोध किया।

प्रधानमंत्री की दिलचस्पी को देखते हुए राज्यों ने इस कार्यक्रम पर सख्ती से अमल किया। अक्टूबर 1991 में मुख्य मंत्रियों के प्रथम सम्मेलन के बाद अब तक लगभग 1.84 लाख एकड़ उपलब्ध अतिरिक्त भूमि वितरित की जा चुकी है और 23.06 लाख एकड़ भूमि फालतू घोषित की जा चुकी है। किन्तु अनेक कारणों से इसका वितरण नहीं किया जा सका है। इसमें से 10.71 लाख एकड़ भूमि विभिन्न मुकदमों में उलझी हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि का रिकार्ड सबसे अधिक महत्वपूर्ण दस्तावेज समझा जाता है। रिकार्डों में हेराफेरी करके पटवारी किसानों को मूर्ख बनाते रहते है। ग्रामीण क्षेत्रों में रिकार्ड ठीक न रखने के कारण अनावश्यक तनाव और मुकदमेबाजी होती है। कृषि विकास की योजनाएं तैयार करने और विकास संबंधी कार्यों को सुचारू रूप से चलाने के लिए भी भूमि संबंधी रिकार्डों का सही अद्यतन होना जरूरी है। काश्तकारों और बटाईदारों को काश्त की अवधि की निश्चितता और जोतों की चकबंदी को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए भी सही और अद्यतन रिकार्ड जरूरी है।

केन्द्रीय सरकार राजस्व प्रशासन को सुदृढ़ और कुशल बनाने के लिए राज्य सरकारों को 50 प्रतिशत और केन्द्र शासित राज्यों को शत प्रतिशत अनुदान सहायता देती है। यह योजना 1988 में शुरू की गयी और 1989-90 से सभी राज्यों में लागू कर दी गयी। इस योजना के अन्तर्गत 31 मार्च, 1992 तक केन्द्र राज्यों को 36 करोड़ 62 लाख रुपए दे चुका था।

देश में हो रहे प्रौद्योगिक परिवर्तनों के अनुरूप भूमि रिकार्ड रखने के लिए कम्पयूटरों का प्रयोग किया जा रहा है। 21 राज्यों, संघ शासित क्षेत्रों के प्रत्येक जिले में इस विषय की प्रायोगिक योजनाएं शुरू की गयी हैं। इस परियोजना के लिए केन्द्र सरकार 25 लाख रुपए प्रति जिले की दर से आवश्यक धन उपलब्ध कराती है। इस योजना के प्रथम चरण में किसानों के अधिकारों के अभिलेख कम्प्यूटर में दर्ज किए जाएंगे। यह समस्त सूचना राज्य की भाषा में रखी जाएगी। इसके लिए तहसील और जिला मुख्यालयों में कम्प्यूटर लगाए जा रहे हैं। कम्प्यूटर में किसानों के मालिकाना अधिकार दर्ज किए जाएंगे और उसकी प्रतिलिपि संबंधित किसान को दी जायेगी। मध्य प्रदेश के मोरेना जिला और राजस्थान के डुंगरपुर जिले में यह परियोजना लगभग पूरी होने जा रही है।

पिछले दो तीन दशकों के दौरान भूमि सुधार के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। तथापि, निहित स्वार्थों ने अपने हितों की रक्षा के लिए सभी संभव उपाय, तिकड़में की हैं। भूमि की

अधिकतम सीमा संबंधी कानून को विफल बनाने के लिए जाली सहकारी समितियां बनाई गयी हैं, नजदीकी रिश्तेदारों को भूमि का पट्टा दिया गया है और केवल बंजर, ऊसर और अनुपजाऊ भूमि अधिकतम भूमि सीमा कानून के अन्तर्गत सरकार को सौंपी गयी है। देश के कुछ भागों में आज भी भूमि सुधार संबंधी कानूनों की व्यवस्था का उल्लघंन करते हुए शक्ति सम्पन्न लोगों के फार्म हैं। सरकार और विभिन्न राजनीतिक दल इस स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए निरंतर संघर्ष कर रहे हैं। ले.क.न कुछ स्थानों पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर भूपतियों, पुराने जमींदारों और बड़े किसानों की पकड़ इतनी मजबूत है कि भूमि सुधार संबंधी सभी कानूनों की खुले आम उपेक्षा की जाती है। सरकार इन कठिनाइयों का समाधान करने के लिए प्रयत्नशील है, लेकिन जनता के पूरे सहयोग के बिना इस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती।

22, मैत्री एपार्टमैंट,
ए/3, पश्चिम विहार, नई दिल्ली

पृष्ठ 13 का शेष

नाबार्ड की विकेन्द्रीकरण ऋण योजना

ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीण ऋण की उत्पादकता में वृद्धि के लिए नाबार्ड ने 1987 से संभाव्यतायुक्त ऋण योजनाएं तैयार करने का काम शुरू किया। ये ऋण योजनाएं संसाधनों और मूलभूत सुविधाओं की उपलब्धता को और ज्यादा कारगर व असरदार बनाने में और कृषि व ग्रामीण विकास कार्यों में लगी एजेंसियों के बीच समन्वय स्थापित कराती हैं। बुनियादी स्तर पर ऋण योजना की प्रक्रिया को और आगे बढ़ाने के लिए नाबार्ड ने अनेक जिलों में जिला विकास प्रबंधक कार्यालय खोले हैं जो जिलों में विभिन्न एंजेसियों द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले संस्थागत ऋणों की ऋण योजना, उनकी जांच और पर्यवेक्षण से संबंधित कामकाज देखते हैं।

351, ध्रुव अपार्टमेंट,
मदर डेयरी के पीछे,
पटपड़ गंज, दिल्ली-110092

पृष्ठ 18 का शेष

अनेक सुझावों को अमल में लाया जायेगा।

योजना आयोग ने प्रति वर्ष रोजगार के एक करोड़ नये अवसर पैदा करने का लक्ष्य बनाया है। उसके लिए गांवों में गैर कृषि व्यापारों को बढ़ावा दिया जायेगा। परती भूमि के विकास पर अधिक जोर दिया जायेगा। लघु एवं ग्रामोद्योगों की हर संभव सहायता की जायेगी।

सीमान्त किसानों और मजूदरों की उत्पादन क्षमता बढ़ायी जायेगी और स्वरोजगार को बढ़ावा मिलेगा साथ ही परियोजनाओं के कार्यान्वयन पर कड़ी नजर रखी जायेगी।

आठवीं योजना का लक्ष्य सचमुच बहुत ही साहसिक और जनकल्याणकारी है। किन्तु इस बात पर सुचारू रूप से अमल भी होगा जबकि देश की आंतरिक स्थित ठीक रहेगी। साम्प्रदायिक सद्भावना कायम रहेगी। नयी अर्थव्यवस्था के कारण अथद अधिकाधिक यंत्रीकरण के कारण बेरोजगार लोगों की रोजी नहीं छिनेगी। जनसंख्या नियंत्रण के प्रयत्न सफल होंगे और बेरोजगारी एवं गरीबी से ग्रस्त नौजवानों का रोष नियंत्रित किया जाना संभव होगा।

ग्राम- पो. मुरगांवा (नालंदा)
पिन - 803114

भारत में भूमि सुधार एवं ग्रामीण विकास

डॉ लक्ष्मीरानी कुलश्रेष्ठ

भूमि सुधार आधुनिक विश्व में होने वाला महत्वपूर्ण परिवर्तन है। संकुचित अर्थ में भूमि सुधारों से तात्पर्य काश्तकारों के लाभार्थ भूमि का पुनर्वितरण करना है। विस्तृत अर्थ में कृषि व्यवस्था में सभी प्रकार के आर्थिक व संस्थागत परिवर्तन भूमि सुधारों के अंतर्गत आते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की तृतीय रिपोर्ट के अनुसार "कृषि प्रणाली दोषपूर्ण होने के कारण सामाजिक व आर्थिक विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने हेतु उपायों का एक समन्वित कार्यक्रम" ही भूमि सुधार है।

भूमि सुधारों के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम मुख्यत: सम्मिलित किये जाते हैं :

1. मध्यस्थों की समाप्ति, जमींदारी व्यवस्था को समाप्त करके काश्तकारों के पक्ष में भू-स्वामित्व का पुनर्वितरण;

2. काश्तकारों की सुरक्षा हेतु काश्तकारी सुधार कानून पारित करके काश्तकारों को भूमि की बेदखली से बचाना;

3. लगान का नियमन करना ताकि जमींदारों द्वारा काश्तकारों के शोषण को रोका जा सके;

4. जोतों की अधिकतम सीमा का निर्धारण तथा अतिरिक्त भूमि का वितरण भूमिहीनों को करना;

5. भूमि स्वामित्व सम्बन्धी लेखों का रखरखाव वैज्ञानिक तरीकों से करना तथा इनको अद्यतन रखना;

6. बिखरे हुए खेतों की चकबन्दी करके भूमि की उत्पादकता बढ़ाना ताकि भूमि का श्रेष्ठतम उपयोग संभव हो सके;

7. सहकारी खेती।

भारत में भूमि सुधार

योजना आयोग के अनुसार कृषि क्षेत्र में कुशलता व उत्पादकता के ऊंचे स्तर को प्राप्त करने के लिए प्राचीन समय से चली आ रही बाधाओं को कम कर, काश्तकारों को सुरक्षा प्रदान कर तथा ग्रामीण जनता के सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान करने हेतु कृषि प्रणाली में विद्यमान शोषण व सामाजिक अन्याय को समाप्त करना - भूमि सुधार कार्यक्रमों के प्रमुख उद्देश्य हैं।

भूमि में संपत्ति अधिकार का उद्गम "अध्यसनवाद" पर आधारित है। इस सिद्धांत के अनुसार जब किसी वस्तु का कोई स्वामी नहीं होता, तब उसका स्वामी वह होता है जो उस पर सर्वप्रथम अधिकार करता है। जो व्यक्ति शाखाविहीन सूखे पेड़ को खोदकर भूमि को जोतने बोने के योग्य बना देता है, उसी को खेत का स्वामी माना गया है तथा जो शिकारी किसी मृग को पहले मारता है, वही उस मृग को पाने का अधिकारी होता है। अन्तर्राष्ट्रीय कानून में भी जिस वस्तु का कोई स्वामी नहीं होता, नैसर्गिक न्याय उस वस्तु पर सर्वप्रथम काबिज व्यक्ति को स्वामित्व प्रदान करता है। भूमि के स्वामित्व का यह सिद्धांत भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में भी मान्य है तथा चल व अचल सम्पत्ति दोनों पर लागू किया जाता है।

भारत में भूमि सुधारों का इतिहास मुख्यत: तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम 1948 से1954 तक जो जमींदारी उन्मूलन अधिनियम के साथ प्रारम्भ होता है। द्वितीय चरण 1955 से काश्तकारी सुधार कानूनों के पारित होने के समय से तथा तृतीय चरण 1956 से जोतों की उच्चतम सीमा निर्धारण के साथ प्रांरभ होता है।

मध्यस्थों की समाप्ति

भारत में स्वतंत्रता पूर्व तीन प्रकार की भूमि-व्यवस्थाएं प्रचलित थीं :-

प्रथम, जमींदारी प्रथा जिसमें भूमि का स्वामित्व जमींदारों के हाथ में था तथा काश्तकार भू-स्वामी को लगान या भुगतान करके खेती करता था। लगान का कुछ भाग राज्य को भू-राजस्व के रूप में प्रदान किया जाता है।

द्वितीय, रैयतवारी व्यवस्था जिसमें काश्तकार ही भूस्वामी होता था तथा भू-राजस्व देने का दायित्व काश्तकार का ही होता था।

तृतीय, महलवारी जिसमें भू-स्वामित्व सामुदायिक होता था, तथा गांव का मुखिया भू-राजस्व एकत्र करके राज्य को देता था। बंगाल, मद्रास, वाराणसी, अवध, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं मध्य प्रदेश में जमींदारी प्रथा महाराष्ट्र, गुजरात, असम में रैयतवारी प्रथा तथा उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के कुछ भागों में महलवारी प्रथा प्रचलित थी। जमींदारी प्रथा के अन्तर्गत काश्तकार तथा राज्य के बीच मध्यस्थों की एक लम्बी श्रृंखला

के कारण काश्तकारों के शोषण को बढ़ावा मिला। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इस व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठी जिसके फलस्वरूप विभिन्न राज्यों में जमींदारी उन्मूलन अधिनियम पारित किये गये। 1952 तक लगभग सभी राज्यों में इस संबंध में अधिनियम पारित किये जा चुके थे। इसके परिणामस्वरूप लगभग 2 करोड़ काश्तकार राज्य के सीधे सम्पर्क में आये तथा लगभग 60 लाख हेक्टेयर भूमि को भूमिहीनों में वितरित किया गया।

लगान का नियमन

स्वतंत्रता से पूर्व लगान की अधिकतम सीमा कुल उपज का 50-70 प्रतिशत हुआ करती थी। पंचवर्षीय योजनाओं में योजना आयोग द्वारा लगान को कुल उपज के अधिकतम 20-25 प्रतिशत करने का सुझाव दिया गया। इस आधार पर अधिकांश राज्यों में लगान की उच्चतम दर निर्धारित करने हेतु अधिनियम पारित हो चुके हैं। लगान की अधिकतम सीमा विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न है।

काश्त की सुरक्षा

काश्त व काश्तकारों को सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से अनेक राज्यों में काश्तकारी सुधार अधिनियम पारित किये गये हैं। इन कानूनों के प्रावधानों के अनुसार दिल्ली व उत्तर प्रदेश में भूस्वामियों को पुन: निजी खेती करने का अधिकार नहीं दिया गया। असम, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में कुछ अवस्थाओं में सीमित क्षेत्र पर भूस्वामी पुन: निजी खेती कर सकते हैं। तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल, आन्ध्र प्रदेश में काश्तकार की बेदखली पर प्रतिबन्ध है, लेकिन कुछ अवस्थाओं में (जैसे लगान न देना, भूमि की उपजाऊ शक्ति को हानि पहुंचाना, भूमि को उपकिरायेदारी पर देना इत्यादि) काश्तकार को बेदखल करके भूस्वामी द्वारा खेती की जा सकती है।

काश्तकारी सुधारों का क्रियान्वयन राज्यों में विभिन्न प्रकार से हुआ है। कुल मिलाकर काश्तकार इन सुधारों से पर्याप्त लाभान्वित नहीं हुए हैं तथा काश्तकारों को बड़ी मात्रा में बेदखल किया गया है। डॉ. ए.एम. खुसरो के अनुसार 42 प्रतिशत काश्तकारों को भूस्वामियों द्वारा काश्तकारी अधिकार छोड़ देने के लिए बाध्य किया गया। काश्तकार मात्र बटाईदार बने रहे। काश्तकारी सुधार कानून लगान का नियमन करने तथा काश्तकारों को स्वामित्व अधिकार दिलाने में असमर्थ रहे। इन कानूनों के अनुसार काश्तकारी के अंतर्गत बटाईदार शामिल नहीं होते। निजी खेती का प्रावधान होने के कारण भूस्वामियों द्वारा भूमि प्राप्त की जा सकती है परन्तु वे वास्तव में इस भूमि पर खेती न करके बटाई पर खेती कराते हैं। मुआवजे की ऊंची दरों के कारण भूस्वामित्व प्राप्त करने में काश्तकार असमर्थ रहते हैं।

एक और दोष यह है कि काश्तकार को स्वामित्व अधिकार तभी प्राप्त होगा जब एक ही भूमि पर लगातार 12 वर्षों से काश्तकार खेती कर रहा हो। परन्तु उचित लेखों के अभाव में यह प्रमाणित करना कठिन होता है। इन सुधार कानूनों के उचित क्रियान्वयन के अभाव में वांछित लाभ काश्तकारों को नहीं मिल सके हैं।

जोतों की अधिकतम सीमा का निर्धारण

जोतों की अधिकतम सीमा का निर्धारण भूमि सुधार का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। इसका उद्देश्य बड़ी भूमियों का सीमा निर्धारण करके अतिरिक्त भूमि को भूमिहीनों में वितरित करना है। अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि छोटे खेतों पर प्रति एकड़ उपज बड़े फार्मों पर प्रति एकड़ उपज की तुलना में अधिक होती है। जापान का उदाहरण सामने है जहां खेतों का औसत आकार 1.2 हेक्टेयर है तथा 52.5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर चावल का उत्पादन होता है जो अमेरिका व रूस के बड़े फार्मों की तुलना में बहुत अधिक है।

सीमा निर्धारण से सम्बन्धित अधिनियम दो चरणों में पारित किये गये हैं - 1972 से पूर्व एवं 1972 के पश्चात्। 1972 से पूर्व की सीमा निर्धारण की इकाई व्यक्ति होता था परन्तु 1972 के पश्चात् पति, पत्नी व बच्चों के परिवार को सीमा निर्धारण हेतु इकाई माना गया। प्रथम चरण में यह सीमा बिहार में प्रति व्यक्ति 10 से 30 एकड़, मध्य प्रदेश में 27 से 75 एकड़, उत्तर प्रदेश में 40 से 80 एकड़ निर्धारित की गई। द्वितीय चरण में यह सीमा प्रति परिवार 9 से 54 एकड़ वर्ष में दो फसल देने वाली सिंचित भूमि के सम्बन्ध में तथा 14 से 27 एकड़ फल देने वाली सिंचित भूमि के संबंध में निश्चित है। प्रारम्भ में इन सीमा कानूनों में अनेक रियायतें प्रदान की गईं परन्तु नई नीति में इन रियायतों को कम करके देश में एक समान व्यवस्था लागू की गई है।

जोतों की चकबन्दी

. चकबन्दी का मुख्य उद्देश्य जोतों के श्रेष्ठतम उपयोग को सुनिश्चित करना है। उपलब्ध भूमि का अनुकूलतम उपयोग जोतों के आकार, फसल, प्रणाली, कृषि आदानों की उपलब्धता तथा खेती करने के तरीकों पर निर्भर करता है। अनुकूलतम आकार के स्थान पर "खेतों का आर्थिक आकार" कहना अधिक

वास्तविक प्रतीत होता है। आर्थिक आकार वह आकार होता है जो एक परिवार को निर्वाह करने के लिए पर्याप्त हो। सामान्यत: 5 सदस्यों के एक परिवार के लिए 5 एकड़ या 2 हेक्टेयर भूमि पर्याप्त मानी जाती है।

भारत में चकबन्दी का कार्य लम्बे समय से चल रहा है। चकबन्दी सर्वप्रथम 1905 में मध्य प्रदेश में प्रारंभ की गई थी। इस समय तक पंजाब तथा हरियाणा में चकबन्दी का कार्य पूर्ण हो चुका है। उत्तर प्रदेश, बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, कर्नाटक तथा मध्य प्रदेश में इस दिशा में पर्याप्त प्रगति हुई है। असम, पश्चिम बंगाल व उड़ीसा में प्रगति संतोषजनक नहीं है। कुल मिलाकर आठवीं योजना के आरम्भ तक लगभग 6000 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर चकबन्दी का कार्य पूरा किया जा चुका है जो देश के कुल क्षेत्र का केवल 33 प्रतिशत है। इस दिशा में और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

भूस्वामित्व के लेखे

भूमि सुधार कानूनों का लाभ काश्तकारों व भागीदारों को मिल सके, इसके लिए भूस्वामित्व के रिकार्ड को अद्यतन रखना बहुत आवश्यक है। अनेकों राज्यों में इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। ये रिकार्ड प्राय: फसल रजिस्टर के आधार पर रखे जाते हैं। 1988 में भारत सरकार ने इस कार्य में कम्प्यूटरों की सहायता लेने का निर्णय किया है। प्रयोग के रूप में कुछ जिलों में यह कार्यक्रम लागू भी कर दिया गया है। राष्ट्रीय स्तर पर भी इस कार्यक्रम को लागू करने का निर्णय लिया गया है।

भूमि सुधार के प्रभाव, समस्या और सुझाव

भूमि सुधारों के परिणामस्वरूप कृषि ढांचा परिवर्तित हुआ है। निर्वाह खेती के स्थान पर अब व्यापारिक खेती तथा बाजारोन्मुख कृषि की जा रही है। एक नये साहसी वर्ग का उदय हुआ है जो बड़ी मात्रा में भूमि पर किराये के मजदूरों तथा नई उत्पादन विधियों से उत्पादन करते हैं। छोटे किसानों की संख्या में वृद्धि हुई है तथा बड़े काश्तकारों के पास भूमि का संकेन्द्रण हुआ है। भूमिहीन कृषि श्रमिकों की संख्या भी बढ़ी है। पिछले चार दशकों में उत्पादन वृद्धि के लाभ केवल सीमित लोगों तक ही पहुंचे हैं। केवल केरल ही एक मात्र ऐसा राज्य है जहां सामान्य ग्रामीणजन के जीवन स्तर में सुधार हुआ है। सारांशत: भारत में भूमि सुधारों की प्रगति धीमी रही है।

योजना आयोग के एक कार्यदल ने इस धीमी प्रगति हेतु उत्तरदायी कारण बताये हैं। इनमें राजनीतिक निष्ठा का अभाव होना, छोटे किसानों की निष्क्रियता, प्रशासनिक कठिनाइयां, कानूनी अड़चनें, भूमि के अद्यतन ब्यौरों का अभाव, विभिन्न राज्यों में समान कुशलता के साथ इन सुधारों को लागू न किया जाना, भूमि सुधारों को राष्ट्रीय कार्यक्रम से पृथक रखकर क्रियान्वित करना, पंचवर्षीय योजनाओं में भूमि सुधारों हेतु अलग से वित्तीय प्रावधान न होना इत्यादि प्रमुख हैं।

भूमि सुधार कार्यक्रमों की सफलता हेतु आवश्यक है कि कृषि में अनुपस्थित भू-स्वामित्व के लिये कोई स्थान नहीं होना चाहिये। सीमा कानूनों को सख्ती से लागू किया जाये, बेनामी भूमि हस्तान्तरणों को रोका जाये, अतिरिक्त भूमि का पुनर्वितरण करके उसके बेचने व गिरवी रखने पर रोक लगाई जाये। भूमि सुधारों के पक्ष में जन समर्थन अति आवश्यक है। सभी स्तरों पर प्रतिनिधि समितियां बनाई जानी चाहिए, जिसमें जन प्रतिनिधि, लाभार्थियों, सरकार के प्रतिनिधियों एवं विशेषज्ञों को शामिल किया जाये।

नई आर्थिक नीति एवं भूमि सुधार

नई आर्थिक नीतियों की प्रकृति विशिष्ट वर्गोन्मुखी है। यदि नई आर्थिक नीतियों को कृषि में लागू किया जाता है तो केवल बड़े किसान ही लाभान्वित होंगे व छोटे व सीमान्त किसान भूमिहीन हो जायेंगे। सब्सिडी समाप्त करने का दुष्प्रभाव सीमान्त कृषकों को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है अत: उनकी सुरक्षा हेतु वैकल्पिक व्यवस्था करनी होगी, उनके लिये रोजगार कार्यक्रमों का विस्तार करना होगा जिसका अतिरिक्त भार राजकीय कोषों पर पड़ेगा। यदि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा बड़े व्यापारिक संस्थानों को कृषि क्षेत्र में प्रवेश की अनुमति दी जाती है तो इससे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को ठेस पहुंचेगी।

निष्कर्ष रूप मे हम यह कह सकते हैं कि हमें कृषि क्षेत्र में उत्पादन में वृद्धि करनी है अथवा समानता व सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करना है तो केवल भूमि सुधार कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन ही इसका एक मात्र उपाय होगा। नई आर्थिक नीतियां कृषि क्षेत्र में भूमि सुधारों का विकल्प नहीं हो सकती है।

अत: भूमि सुधार कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु आवश्यक है कि ग्रामीण व भूमि सुधार में लगे संगठनों को शक्तिशाली बनाया जाये। भूमि सुधार से ही ग्रामीण विकास संभव है।

विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र विभाग),
दयालबाग एजूकेशनल इन्सटीट्यूट,
दयालबाग, आगरा-5

कहानी

अवशेष

रीना तिवारी

छप्पर टप-टप चू रहा था। रमिया एक कोने से दूसरे कोने तक सामान हटाते-हटाते तंग आ गई थी। बार-बार वह भगवान को कोसती और सामान को बचाने की फिक्र में पड़ी बुदबुदाती इस कोने से उस कोने तक दौड़ लगा रही थी।

ठीक ऐसी ही हालत हरखू कुम्हार की थी। वह अपने को बरतनों को लेकर परेशान था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि इस गांव पर भगवान की ऐसी कृपा इतनी जल्दी कैसे हो गई। अभी एक डेढ़ घंटे पहले कड़ाके की धूप थी। बदन जलने को आ जाता था। फिर न जाने कहां से गांव के ऊपर इतने सारे बादल घिर आये और अब छप्परफाड़ पानी पड़ रहा था। नीम के पेड़ के नीचे बंधी बछिया को हरखू ने जल्दी-जल्दी खोलकर दालान के भीतर कर दिया। फिर बचे बरतनों को, जिन्हें उसने कल ही चाक पर गढ़ा था, पानी से बचाने की फिक्र में पड़ा रहा।

कुछ बरतनों को उसने मोटे-मोटे टाट से ढक दिया था और बाकी को उठा-उठा कर दालान के भीतर रख रहा था। इस पर भी उसके दिल की धड़कन तेज थी। अगर ये बादल दो दिन पहले ही कहीं दीख गये होते तो वह बरतन बनाता ही क्यों? उसे अब इस बात का अफसोस हो रहा था। वह मन ही मन खीझ रहा था, कुछ कुढ़ रहा था।

घर के भीतर से सामानों के उठा-पटक की आवाज वह बहुत देर से सुन रहा था। कई बार तो उसकी इच्छा हुई कि रमिया को पुकार कर कहे, और बचुआ के भाई के यहां आ जावे।

वह चाहता था कि सब कुछ यों ही छोड़कर चुपचाप बैठ जाये। जो होगा, होगा। पानी में सब कुछ बह ही तो जायेगा। कोई हमारा करम तो ले नहीं जायेगा। वह सोच रहा था, ''रमिया को बुलाकर कह दे और क्या उठा-पटक करती हो। जो भाग में होगा वो तो होगा ही। कब तक इधर-उधर सामान करोगी?''

''लग रहा है, सारा गांव बह जायेगा इस बरसात में। दो ही घंटे में कैसा बन गया हय गांव? अभी तो दो घंटे पहले वह मंदिर पर बैठा भजन गा रहा था। सवा महीने का कीर्तन चल रहा है. अखंड कीर्तन। अब तो शायद वह भी बंद हो गया होगा। भला ऐसी बौछार में कौन अपनी जान देकर कीर्तन करेगा? फिर अपना-अपना घर भी तो देखना होगा सबको। राम-राम, भगवान के काम में भी विघ्न पड़ गया।''

अचानक अन्दर से किसी चीज के जोर से गिरने की आवाज से वह चौंक गया। वह अन्दर की ओर दौड़ा। अन्दर रमिया विस्मित, दुखित सी दरवाजे के पास खड़ी थी। वह गुमसुम-सी बस एक ओर ताके जा रही थी। हरखू ने देखा, पूरब की तरफ का छप्पर टूटकर नीचे आ गिरा था और ऊपर बादलों से घिरा आकाश नजर आ रहा था। जल की बौछार अब सीधे घर में आकर गिर रही थी।

हरखू ने रमिया को देखा। रमिया ने हरखू को। रमिया की आंखें अब तक भर आयी थीं। वह गिरे हुए छप्पर को खोई-खोई आंखों से देख रही थी।

''अब का होई बचुआ के बाबू?''

''घबरा मत बचुआ की माई।'' हरखू ने उस कोने से सामान खींचकर दूसरी तरफ कर दिया। फिर रमिया के साथ एक तरफ चुपचाप बैठ गया। टूटे छप्पर ने उसके सूखे घाव को फिर से हरा कर दिया था। दोनों चुपचाप खोई-खोई आंखों से उस टूटे छप्पर को देख रहे थे। इस छप्पर ने उनका बहुत बड़ा सुख छीन लिया है। या कहा जाये ऐसी ही बरसात थी जिसने उनके जीवन को उतना बड़ा धक्का दिया था। तब से ही तो इन दोनों के जीवन में ऊब भर गई है। बहुत कोशिश के बाद उस घाव को भर सकने में कुछ सफल हुए थे दोनों। पर आज इस टूटे छप्पर ने फिर उस घाव को उकेर दिया है।

तब बचुआ की उम्र ही क्या होगी? यही अठारह-उन्नीस। एकदम जवान पट्ठा। गांव में उसके जोड़ का दूसरा लड़का था ही कौन? और वैसे जवान पट्ठे को यह बरसात खा गई थी। कितनी काली रात थी वह। ऐसी ही छप्पन कोट की बरसात हो रही थी। बेचारा बचुआ। दिन भर का हारा थका अभी लेटा ही था उस रात... और फिर उठ न सका। रात को छप्पर उसके ऊपर आ गिरा था और वह.. रमिया सुबक रही है। हरखू चुपचाप आकाश को ताक रहा है। टूटे छप्पर से आसमान का एक टुकड़ा उसके सामने नाच रहा था। वह बेसुध-सा उसे ही देखे जा रहा था। न जाने कितनी शिकवा-शिकायत थी उन आंखों में जो उस आसमान के टुकड़े पर जमी थी।

बचुआ के यों मर जाने पर लोगों ने कितना अफसोस प्रकट किया था। एकदम जवान पट्ठे की मौत पर भला किसको शोक न होता। रमिया की हालत तो अजीब हो गई थी। उसका दुख किसी बात से कम नहीं हो रहा था। वह बस रोये जा रही थी। रोते-रोते उसकी आंखों में धुंधलापन छा गया। चीख-चिल्लाकर वह घर को सिर पर उठा लेती थी। रात को अकेली ही बड़बड़ाती हुई गांव से बाहर निकल जाती और अपने बचुआ को खोजती फिरती। वह तो हरखू था जो उसे संभाले रखता वरना वह पागल ही हो जाती। कसर बाकी क्या रह गई थी। न खाने की सुध, न वस्त्रों की। अर्द्ध-विक्षिप्त सी घूमती रहती।

पर हरखू का दुख अलग किस्म का था। उसकी आंखों से एक बूंद भी पानी नहीं टपका था। शून्य दृष्टि से बस सब कुछ देखता रहता। नाते-रिश्ते के लोग आते और आंखों पर कपड़ा रखकर देर-देर तक रोते रहते। परन्तु उसकी आंखे न भीगी। होई है सोई जो राम रचि राखा - वह बड़बड़ाता और चुपचाप बैठा रहता।

उसकी इस अकस्मात् की आयी विपदा की बात से सबको दुख हुआ। गांव के मुखिया सिंह जी आकर तब कितनी बातें उसे समझा गए थे। और वह चुपचाप उनकी बातें सुनता गया था। वैसे कई बार उसकी इच्छा हुई थी, सिंह जी को टोक दे, उनके पास से हट जाये। न जाने क्या उसके हृदय में उबल रहा था। सिंह जी की बातें कांटे सी चुभ रही थीं। लोगों की सहानुभूति से वह घड़बड़ा रहा था। आज सबके सब मोहब्बत दिखाते हैं और जरूरत के समय आंखे फेर लेते हैं।

वह इन स्वार्थी लोगों से घृणा करता था। वह जानता था, "इन लोगों ने ही मिलजुल कर उसके बेटे को उससे छीन लिया है। सब जलते रहे उसका रूप देखकर। अगर इन लोगों ने मौके पर मेरी मदद कर दी होती, मेरी कमाई दे दी होती तो फिर बचुआ क्यों मरता? वह उस पैसे से अपने घर के छप्पर को मजबूत बना लेता। पर सबने उसे कैसे ठुकरा दिया था? आखिर वह कर भी क्या सकता था? गांव के ये बड़े लोग ही तो उसके करता-धरता हैं। उनसे जोर देकर वह कुछ भी नहीं कह सकता। बस विनती कर सकता है। इससे ज्यादा कुछ नही।"

वह उस साल कितना दौड़ा हर गृहस्थ के घर, पंडित लोगों के पैरों पर गिरा था। बाबू साहब लोगों के सामने अपनी पगड़ी खोल कर रख दी थी। रो-रो पड़ा था। पर कहीं से उतना कुछ वह नहीं पा सका जितने से उसकी जरूरत पूरी हो सकती। उसके छप्पर की मरम्मत हो सकती। रमिया ने भी बहुत कोशिश की थी। घरों के अन्दर जा-जाकर उसने मांगा था। रोई थी, गिड़गिड़ाई थी। पर घरवालियों ने साफ-साफ उससे कह दिया था - "हरखबों तुमसे क्या छिपा है। जानती हो। सब लेन-देन द्वार से होता है।" रमिया मन मसोस कर रह जाती थी।

और हरखू छप्पर नहीं बना पाया था। उस दिन कितनी जोर से बादल गरजे थे। बिजली चमकी थी। गांव को बहा देने वाला पानी पड़ा था। और उसका छप्पर धस गया था। बेचारा बचुआ। गहरी नींद में शान्त बचुआ। तब उसे क्या पता था कि यह बरसात गांव को नहीं, उसे बहा ले जाने के लिए आई है। सिर्फ उसे। और वह बह गया था।

लग रहा है, पानी रुकेगा नहीं। टप-टप-टप पानी की बड़ी-बड़ी बूंदें उनके चेहरे पर आ आकर गिरने लगी है। रमिया भयभीत सी आसमान की ओर देखे जा रही है। हरखू की हालत भी ठीक उसी तरह की है। वह अपने को संभालने की कोशिश करता है। कारण वह जानता है, होइ है सोई जो राम रचि राखा। अगर गांव को बह जाना होगा बह जायेगा। अगर उनके भाग्य में बिना घर-बार के रहना लिखा है, तो वे रो-धोकर ही क्या कर सकते है?

वह रमिया को समझाता है, "चुप कर बचुआ की माई, चुपकर।"

हरखू रमिया को थामे-थामे दरवाजे के बाहर आ खड़ा हुआ है। बाहर कैसी हालत है अरे! यह गांव क्या उसका अपना गांव है? पानी में डूबा हुआ सारा गांव।

दोनों चकित होकर एक दूसरे का मुंह देखते रहते हैं। हरखू अपने को बरतनों को देखता है, जो गल गलकर पानी के साथ बहते जा रहे है। हाय! इतने दिनों की मेहनत इस तरह बरबाद हो गई। अब तो पूरा साल ही अन्न का अभाव रहेगा। भूखे! सोच-सोचकर आंखे भर आयीं। दरवाजे के पास ही बैठकर दोनों कभी आकाश को देखते रहे, कभी सामने फैले पानी के बहाव को।

अभी मेघ हटे नहीं है। पर पानी का जोर रुक गया है। आज दो दिनों के बाद एक दो चेहरे बाहर नजर आ रहे हैं। किन्तु गांव भर में तहलका मचा हुआ है। सरजू नदी बढ़ रही है। उसका रुख गांव की ओर ही है। अब क्या किया जाये? कोई अपने घर का सामान उठाकर दूसरे गांव में पहुंचा रहा है, कोई गाय-बैल-भैंस आदि अपने दूर के रिश्तेदारों के यहां भेजने में व्यस्त है। बाढ़ इस बार सारे गांव को ले डूबेगी। इसमें संदेह नहीं लोगों में भगदड़ मच गई है। सरजू का उबाल बढ़ा ही जा रहा है। मेघ फिर बरसने

लगे हैं।

और दूसरे दिन ही पूरा गांव बाढ़ की चपेट में था।

जो भाग सकते थे, भाग गये थे। जो बच गए थे वे बाढ़ के पानी में ही घिरे रहे। कई दिनों तक।

सात-आठ दिनों बाद बाढ़ का वेग कम हुआ। गांव का नामोनिशान तक मिट गया है। बाढ़ में खोये-भूले आदमियों की खोज सरकारी आदमी नौकाएं ले लेकर चारों तरफ दौड़धूप कर रहे हैं। सारा गांव दरिया बन गया है। इसमें किसको कहां खोजा जाये? दो-चार पक्के मकानों के अवशेष बचे रह गए थे। इन घरों में आ-आकर बहुत लोगों ने आश्रय लिया था। इन लोगों ने बाढ़ से पहले अपने गांव को छोड़ा नहीं था और बाद में छोड़ने का मौका नहीं मिला था। नौकाएं इन्हीं घरों के आसपास चक्कर लगा रही थी। कुछ लाशें मिली थी, पर उन्हें पहचाने कौन?

एक घर में जब नाव वाले भीतर जा रहे थे, अचानक किसी के अट्टहास से वे चौंक पड़े। इस तरह की राक्षसी हंसी भला इस बियावान में और इस भयानक हालात में कौन हंस सकता है? कौन है? पर वह अचानक की हंसी सिर्फ गूंजती रही। बीच में रोने और चीखने की आवाज आयी। फिर वही हंसी। कहीं से कोई उत्तर नहीं। कौन है?

खोजियों के चेहरे पर स्याही फैल गयी। अचानक ही इस हंसी ने उनके अन्दर भी कम्पकम्पी भर दी थी। कुछ देर बाद वह हंसी बंद हो गई और कोइ स्त्री जोर-जोर से चीखने लगी।

खोजिये साहस करके आगे बढ़े। जिस कमरे से हंसने की आवाज आयी थी - उसमें आकर देखा। भीतर एक स्त्री पर उनकी नजर पड़ी जो इधर-उधर दौड़ रही थी, चीख रही थी, हंस रही थी - पागलों की तरह। और एक मर्द उसके पीछे-पीछे इस तरह दौड़ रहा था जैसे औरत को संभालने की कोशिश में हो।

औरत शायद थक गई थी, उस कारण वह कुछ देर बाद ही धम्म से एक जगह बैठ गई और दीवार से सिर टिकाकर छत्त की ओर देखने लगी। पुरुष भी थका हुआ ही नजर आ रहा था। औरत के बैठते ही वह भी उसके पास ही बैठ गया और उसके एक हाथ पर अपना हाथ रखते हुए बोला, ''घबड़ा मत बचुआ की माई, घबड़ा मत। भगवान इतना निर्दयी नहीं कि हम दोनों को भी जुदा कर देगा। दुख में धीरज नहीं खोना चाहिए।''

औरत की आंखे फिर बरस पड़ीं और वह अपने पति की छाती से चिपक जोर-जोर से रोती रही।

बाहर खड़े लोगों की आंखे भी भर आई थी और अब वे लोग उन दोनों को बचाने के लिए आगे बढ़ रहे थे।

10101-बी-4, वेस्ट गोरख पार्क,
शाहदरा, दिल्ली-110032

लेखकों के लिए

रचना और अन्य प्रकाशनार्थ सामग्री भेजने वालों से अनुरोध है कि रचनाभेजते समय वे कृपया इन बातों का ध्यान रखें :-

रचना संक्षिप्त एवं रोचक होनी चाहिए।इसमें उपलब्ध करायी गयी जानकारी अप्रकाशित और प्रमाणित होनी चाहिए।

रचना दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप की हुई हो जो सात-आठ पृष्ठों से अधिक की नहीं होनी चाहिए। विषय प्रतिपादन में उपशीर्षकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

रचना के साथ ब्लैक एंड व्हाइट फोटो भी आमंत्रित हैं।

कृषि उत्पादन पर भूमि-सुधारों का प्रभाव

✍ आर.के. शर्मा, अनिल कुमार और एस.के. चौहान

सन् 2000 तक विश्व की आबादी छह अरब से अधिक होगी और उसे 1980 के मुकाबले 50 से 60 प्रतिशत अधिक उत्पादन की आवश्यकता पड़ेगी, जबकि विकासशील देशों में खाद्यान्नों की मांग लगभग दुगनी हो जायेगी। जनसंख्या-वृद्धि के कारण खेती-योग्य भूमि का विभाजन हो गया है, जिसके फलस्वरूप कुल भूमि का 87 प्रतिशत हिस्सा ऐसा है, जिसके अलग-अलग हिस्से 2 हेक्टेयर से कम रकबे के हैं। भारत में खेती-योग्य भूमि प्रति व्यक्ति 0.18 हेक्टेयर उपलब्ध है। भारतीय अर्थव्यवस्था प्रमुखत: कृषि पर आधारित है और 67 प्रतिशत आबादी की जीविका खेती पर निर्भर है। इसके अलावा कृषि-क्षेत्र का राष्ट्रीय आय में लगभग 30 प्रतिशत का योगदान है।

हमारे यहां प्रति व्यक्ति आय आमतौर पर कम तो है ही, साथ में जनसंख्या के विभिन्न वर्गों के बीच आय के स्तर में बड़ी विषमताएं हैं। नीति-निर्माताओं की चिन्ता आज यह है कि जो लोग घोर निर्धनता में जीवन-यापन कर रहे हैं, उनके जीवन-स्तर में समुचित सुधार कैसे लाया जाये। ग्रामीण परिवारों के लिए खाद्य सुरक्षा के अन्तर्गत वे सभी कारक समाहित हैं जो पर्याप्त खाद्य आपूर्ति को प्रभावित करते हैं।

भूमि सुधार क्यों?

यह भली भांति स्वीकार किया गया है कि भूख और गरीबी के खिलाफ संघर्ष के दौरान एक ऐसी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में, भूमि सुधार प्रभावकारी हथियार हैं, जिसमें छोटे और सीमान्त किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की प्रधानता हो। भूमि-सुधारों के अन्तर्गत न केवल भूमि का पुनर्वितरण शामिल है बल्कि काश्तकारी और भूमि-प्रबन्धन संबंधी अन्य पहलू, भूमि के इस्तेमाल के संरक्षण के उपाय, भूमि-प्रदूषण की रोकथाम आदि बातें भी इसके अन्तर्गत आती हैं।

विशुद्ध खेती योग्य भूमि के अभाव के कारण व्यापक खेती द्वारा उत्पादन बढ़ाना संभव नहीं है। अत: निरन्तर बढ़ती आबादी के वास्ते खाद्यान्नों की पैदावार में वद्धि के लिए एक मात्र विकल्प यह बचता है कि संसाधनों के उपयोग से उत्पादकता में बढ़ोतरी की जाए। कृषि क्षेत्र में उत्पादकता दो परस्पर-निर्भर बातों पर आधारित है। पहली बात विभिन्न कृषि-निवेशों, बढ़िया बीजों, उर्वरकों, संयत्रों, सुरक्षा उपायों, सिंचाई आदि का उपयोग किया जाए और दूसरा किसानों में भूमि के वितरण के बारे में फिर से विचार किया जाए। भूमि सुधारों के जरिए काश्तकारी संबंधों में परिवर्तन किए गए हैं ताकि काश्तकारों को सामाजिक और आर्थिक न्याय मिल सके। सरकार के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप से कृषि के ढांचे में जो परिवर्तन होते हैं उन्हें भूमि सुधार कहते हैं। इनके अंतर्गत भूमि के पट्टों में परिवर्तन, कमजोर वर्गों के बीच भूमि का पुनर्वितरण और साथ ही कृषि ऋण, विपणन, विस्तार और अनुसंधान से संबधित सेवाओं को उपलब्ध कराया जाना शामिल है। भूमि-सुधार नीतियों का उद्देश्य उपलब्ध संसाधनों से कृषि-जिन्सों के उत्पादन में वृद्धि करना है, जिससें बहुसंख्यक ग्रामीण आबादी के लिए आय और रोजगार के अतिरिक्त अवसर जुटाये जा सकें। ऐसे में यह बात और महत्वपूर्ण हो जाती है कि लगातार बढ़ रहे बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराने की क्षमता अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में उतनी नहीं है, जितनी कृषि क्षेत्र में है।

हिमाचल प्रदेश का इस क्षेत्र में विशिष्ट स्थान है, जहां सर्वाधिक क्रांतिकारी भूमि सुधार लागू किए गए। हिमाचल प्रदेश में भूमि काश्तकारी प्रणाली के अन्तर्गत काश्तकारों को भू-स्वामी बनाया गया। जिसका उद्देश्य ऐसे भूस्वामियों के अधिकारों को समाप्त करना था जो स्वयं खेती नहीं करते और उन काश्तकारों के कब्जों की सुरक्षा सुनिश्चित करना था जो भू-स्वामी नहीं थे। राज्य में भू-स्वामित्व संबंधी अधिकारों में सुधार और खेती योग्य भूमि के आकार संबंधी विषमताओं पर काबू पाने के लिए समय-समय पर विभिन्न अधिनियम बनाये गये।

सन् 1952 में, पंजाब काश्तकार (हिमाचल प्रदेश संशोधन) अधिनियम और हिमाचल प्रदेश काश्तकार अधिकार तथा पुनरुद्धार अधिनियम लागू किए गए। इन अधिनियमों में काश्तकार द्वारा भू-स्वामी को दिए जाने वाले किराए को अधिकतम सीमा फसल के उत्पादन का चौथा हिस्सा तय की गई। हिमाचल प्रदेश सरकार ने 1953 में भूमि सुधार अधिनियम और बड़ी-बड़ी भू-परिसम्पत्तियों के स्वामित्व को समाप्त करने संबंधी अधिनियम पारित किए। इनका उद्देश्य बिचौलियों को समाप्त

करना और काश्तकारों को मालिकाना हक प्रदान करना है। सन् 1953 तक 80 प्रतिशत कृषक भूमिहीन थे जो दूसरों की भूमि जोतते थे, और उन्हें उत्पादन का बहुत थोड़ा हिस्सा ही मिल पाता था, तथा वे भू-स्वामियों की दया पर ही निर्भर थे। किन्तु, इस अधिनियम के लागू होने के बाद 4.75 लाख ऐसे परिवारों को भूमि का मालिकाना हक प्रदान किया गया, जो दूसरों की भूमि की जुताई करते थे। इस अधिनियम की प्रमुख खामियों को 1972 में बनाए गए हिमाचल प्रदेश कृषि-भूमि परिसीमन अधिनियम और हिमाचल प्रदेश काश्तकार तथा भूमि सुधार अधिनियम- में दुरुस्त किया गया। इन अधिनियमों के अंतर्गत काश्तकार स्वत: ही भू-स्वामी बन गए। सन् 1974 में हिमाचल प्रदेश गांव शामलात भूमि वितरण और उपभोग अधिनियम लागू किया। इसके तहत शामलात भूमि को सरकार के सुपुर्द किया गया ताकि उसका वितरण खेतिहर मजदूरों और भूमिहीन लोगों में किया जा सके। भूमि सुधार अधिनियम लागू हो जाने के बाद भू-स्वामियों को संख्या में लगभग सभी जिलों में वृद्धि हुई। इनमें सबसे अधिक वृद्धि लाहुल-स्फीति (38.7 प्रतिशत) और सबसे कम वृद्धि ऊना (11.10 प्रतिशत) जिले में हुई। खेती योग्य भूमि की उपलब्धता में सर्वाधिक बढ़ोतरी सिरमौर (22 प्रतिशत) और सबसे कम वृद्धि शिमला (0.11 प्रतिशत) में हुई।

हिमाचल प्रदेश में काश्तकारों को भूमि हस्तांतरण करते समय भू-स्वामियों को स्वयं खेती करने के लिए जमीन अपने पास रखने के मामलों में भी काफी सुरक्षा दी गई। भूमि सुधारों का आर्थिक पक्ष अभी भी सुदृढ़ है और ऐसी नीति अपनायी जा रही है कि भूमि के बेहतर वितरण और स्वामित्व से अधिक उत्पादकता और आय प्राप्त की जा सके। इससे आय और रोजगार में काफी वृद्धि होने की संभावना है। अत: यह जरूरी है कि ग्रामीण समुदायों के विभिन्न सामाजिक-आर्थिक पहलुओं पर भूमि-सुधारों के प्रभाव का आकलन किया जाए। हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिले में भूमि के स्वामित्व, फसल-उत्पादकता और आय तथा रोजगार में बुनियादी परिवर्तनों पर भूमि सुधारों के प्रभाव का अध्ययन किया गया।

अध्ययन-विधि

हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिले में भूमि स्वामित्व परिसीमन अधिनियम के तहत फालतू भूमि का वितरण किया गया और काश्तकारों को भूमि पट्टे पर दी गई। दो चुने हुए विकास खण्डों में 60 किसानों का नमूने के तौर पर अध्ययन किया गया। ये विकास खंड थे, पंचरुखी और बैजनाथ। प्रत्येक विकास खंड में 25 व्यक्ति ऐसे थे, जिन्हें भूमि वितरित की गई थी (इनमें वे किसान शामिल थे, जो या तो भूमिहीन थे या खेतिहर मजदूर किन्तु उन्हें भूमि सुधारों के बाद 0.4 हेक्टेयर भूमि प्रदान की गई थी), अन्य 25 काश्तकार-बनाम-भू-स्वामी थे। (ऐसे किसान जो बड़े जमींदारों की भूमि जोतते थे लेकिन अब उस भूमि के मालिक बन गए थे), और भू-स्वामी थे (यानी जो सुधारों से पहले और सुधारों के बाद खेती करते थे) लेकिन उनकी फालतू जमीन दूसरे कृषकों को वितरित कर दी गई थी।

अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष

अध्ययन से पता चला है कि प्रत्येक व्यक्ति को आबंटित की गई भूमि का औसत आकार 0.36 हेक्टेयर था। काश्तकार-बनाम-भूस्वामी, जिन्होंने पहले पट्टे पर जमीन दी थी, उन्हें भूमि सुधारों के बाद औसतन 0.44 हेक्टेयर भूमि मिली। भूमि सुधारों के बाद भूस्वामियों की जमीन के आकार में औसतन 21 प्रतिशत की कमी आयी। पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण हिमाचल प्रदेश में खेत आकार की दृष्टि से बहुत छोटे और बिखरे हुए हैं, यह प्रभावकारी ढंग से खेती के मार्ग में एक बहुत बड़ा व्यवधान है, क्योंकि छोटे-छोटे खेतों के लिए अधिक संसाधनों का व्यय करना पड़ता है। इस प्रक्रिया को रोकने के लिए राज्य सरकार ने खेती योग्य भूखंडों की चकबंदी का काम शुरू किया है। भूमि सुधारों के बाद भूखंडों के आकार में औसत वृद्धि काश्तकार-बनाम-मालिकों के मामले में 0.33 हेक्टेयर से 0.39 हेक्टेयर तक तथा भू-स्वामियों के मामले में 1.11 हेक्टेयर से 1.92 हेक्टेयर तक हुई है। भूमि सुधारों के बाद भूखंड से भूखंड की दूरी और निवास से खेत की दूरी भी कम हुई है। इसका कारण यह है कि अधिकांश किसानों ने आबंटित भूमि पर ही मकान बना लिए या फिर निवास के आस-पास की भूमि को ही आबंटित करा लिया। भूमि सुधारों के फलस्वरूप सभी महत्वपूर्ण फसलों की उत्पादकता में वृद्धि हुई, लेकिन प्रति हेक्टेयर पैदावार में सबसे अधिक बढ़ोतरी काश्तकार-बनाम-भूस्वामियों के खेतों में हुई। जहां तक परिवारों की आय के वितरण का प्रश्न है, काश्तकार-भू-स्वामियों की कृषि आय में 25 से 40 प्रतिशत तक बढ़ोतरी हुई। लेकिन, खेत-मालिकों के मामले में आय 54 प्रतिशत से घटकर 50 प्रतिशत रह गई। यह भी बड़ा रोचक तथ्य है कि भूमि सुधारों के बाद आबंटित खेतों पर दिहाड़ी पर काम करने वाले मजदूरों की आय 81 प्रतिशत से घटकर 33 प्रतिशत रह गई। काश्तकार-भूस्वामियों के मामले में आय 26 प्रतिशत से कम होकर 6 प्रतिशत रह गई।

शेष पृष्ठ 35 पर

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का पुनर्निमाण - एक अहम् समस्या

✍ डॉ. ज्योति कपूर एवं डॉ. जी.एस. शेखावत

भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अर्थ क्षमता में निरन्तर गिरावट काफी समय से एक कष्टदायक चिन्तनीय विषय बना हुआ है। हाल ही के वर्षों में दो विशेषज्ञ समितियों ने इस अहम् मुद्दे की जांच की है। खुसरो कृषि साख समीक्षा समिति (1989) इस निष्कर्ष पर पहुंची कि इन बैंकों का विलय उनसे सम्बद्ध प्रायोजक बैंकों के साथ कर दिया जाए। सरकार ने इस सिफारिश पर इसलिए अमल नहीं किया क्योंकि इससे इन बैंकों का बुनियादी स्वरूप ही बदल जाता। दूसरी ओर, वित्तीय प्रणाली की जांच से सम्बंधित नरसिंहम् समिति (1991) ने कुछ भिन्न सिफारिश की है। उसके अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ग्रामीण बैंकिंग सेवा हेतु, पृथक सहायक कम्पनियां स्थापित करें ताकि उन्हें उनकी ग्रामीण शाखाएं हस्तांतरित की जा सकें। एक विकल्प के रूप में इस समिति ने यह सुझाव भी दिया कि ग्रामीण बैंक चाहें तो अपनी मूल पहचान बनाए रखें अथवा प्रायोजक बैंकों की प्रस्तावित सहायक कम्पनियों के साथ मिल जाएं किंतु साथ ही इस समिति का स्पष्ट मत है कि विलय पूरी तरह वाणिज्यिक आधार पर किया जाए। इस संदर्भ में यह स्मरण रहे कि ग्रामीण बैंकों के पुनर्निमाण का उद्देश्य इन बैंकों की वित्तीय स्थिति में सुधार के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों को अधिक ऋण उपलब्ध कराना है।

वर्तमान स्थिति

वर्तमान में अधिकांश क्षेत्रीय बैंकों की वित्तीय स्थिति भयावह रूप ले चुकी है। भारत में कार्यरत 196 ग्रामीण बैंकों में से केवल 44 बैंक ही सीमान्त लाभ कमा पाये हैं जबकि शेष 152 बैंकों का घाटा काफी बढ़ चुका है। इनमें से 134 बैंक अपनी जमा राशियों के एक अंश को भी खो चुके हैं। अनुमान ऐसा है कि चालू वर्ष के अन्त तक इनका संचित घाटा 850 करोड़ रुपये तक पहुंच जाएगा।

नया सरकारी प्रस्ताव

इस सम्पूर्ण मसले पर विचार करने के पश्चात् भारत सरकार ने यह प्रस्ताव किया है कि एक राष्ट्रीय ग्रामीण बैंक गठित कर दिया जाए।अभी तक इस बैंक के स्वरूप पर कोई अन्तिम निर्णय नहीं लिया गया है। प्रस्तावित राष्ट्रीय बैंक की स्थापना से पूर्व इससे संबंधित पहलुओं पर विचार करना श्रेयस्कर होगा ताकि इस जटिल समस्या का स्थायी समाधान निकल सके।

सरकारी बैंकों का स्वरूप

यह सर्वविदित है कि देश में संस्थागत ग्रामीण वित्त की समस्या के निराकरण हेतु समय-समय पर अपनाए गए सभी उपाय मोटे तौर पर असफल साबित हुए। इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम 1955 में भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना करके उठाया गया। इस बैंक से यह आशा की गयी कि यह ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवस्था के विस्तार में अपना योगदान करेगा। इस बैंक की स्थापना से यह स्वप्न संजोया गया था कि यह एक अखिल भारतीय ग्रामीण बैंक के रूप में उभरेगा, लेकिन यह महाकाय वाणिज्यिक बैंक बन कर रह गया। इसी तरह 20 राष्ट्रीयकृत बैंकों का भी ऐसा ही हश्र हुआ। इनके पास ऐसे बैंक कर्मचारियों का अभाव रहा जो ग्रामीण शाखाओं के सफल संचालन हेतु वहां की स्थानीय संस्कृति, स्वभाव एवं आवश्यकताओं के साथ समन्वय स्थापित कर सकें। ग्रामीण क्षेत्रों में साख संबंधी लागत को कम करने तथा साख वितरण व्यवस्था को प्रभावी बनाने के लिए पुनः एक और परीक्षण 1975 से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना के रूप में किया गया। लेकिन ये बैंक भी पूर्व बैंकों की भांति ग्रामीण साख क्षेत्र में अपनी अहम् भूमिका अदा करने में विफल रहे। यह कैसी विडम्बना है कि जहां एक ओर बैंकिंग प्रणाली को जमाओं का संरक्षक समझा जाता है, वहीं यह देखने में आया है कि आज बहुत से ग्रामीण बैंक, आय-अर्जन की क्षमता कम होने से, अपने कर्मचारियों के वेतन का भुगतान इनके पास सुरक्षित रखी जमाओं में से करने लगे हैं। आय-अर्जन क्षमता में ह्रास होने से इनके घाटे में निरन्तर वृद्धि हो रही हैं। बढ़ते घाटे के अनेक कारणों में से एक मुख्य कारण यह है कि इनके ब्याज-आय अनुपात एवं ब्याज-लागत अनुपात का अन्तर अर्थात् 'प्रसार' लगभग 2.5 प्रतिशत आता है जो इतना अपर्याप्त है कि इनकी शाखाओं के व्यय को भी पूरा नहीं कर पाता। इसी प्रकार, इनकी स्थापना के समय यह निर्णय लिया गया था कि इनमें कार्यरत कर्मचारियों के वेतनमान संबंधित राज्यों में इनके समकक्ष पदों के अनुसार निर्धारित किए जाएं जिससे इन पर होने वाले लागत व्यय में वृद्धि न हो। यह सही है कि संशोधित वेतनमानों से पूर्व सभी बैंक कर्मियों के वेतन

भुगतान पर होने वाला व्यय कुल व्यय का 20–25 प्रतिशत था किन्तु राष्ट्रीय औद्योगिक ट्रिब्यूनल की सिफारिशों के अनुसार वेतनमानों में की गई बढ़ोतरी के कारण यह व्यय अब बढ़कर 40–42 प्रतिशत तक हो गया है। हाल ही के वर्षों में इन बैंकों के कर्मचारियों में अनुशासनहीनता की प्रवृत्ति बढ़ी रही है। औद्योगिक विवाद अधिनियम में अनुशासनात्मक कार्यवाही का प्रावधान न होने के कारण यह देखा गया है कि इनके कर्मचारीगण एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम में भाग लेने से मुकरने लगे हैं तथा 'नाबार्ड' को प्रस्तुत किए जाने वाले वैधानिक लेखा-जोखा भी तैयार नहीं करते हैं।

अर्थपूर्ण बैंकिंग इन्पुट

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि भारत का ग्रामीण साख ढांचा जिसे अथक परिश्रम से चार दशकों की लम्बी अवधि में खड़ा किया गया था, इस समय विध्वंस के कगार पर है। अत: अब बिना अधिक देर किए सम्पूर्ण ग्रामीण बैंकिंग प्रणाली को नया स्वरूप दिये जाने की आवश्यकता है। इस कार्य हेतु निम्नलिखित बैंकिंग इन्पुटों को मद्देनजर रखने की परमावश्यकता है ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण देने की प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से संचालित किया जा सके:--

प्रथम, इन बैंकों को बैंकिंग-व्यवसाय से संबंधित सभी गतिविधियों को सम्पन्न करने हेतु उचित स्वायत्त अधिकार दिये जायें जिससे इनकी लाभ अर्जन क्षमता में वृद्धि हो।

द्वितीय, ग्रामीण साख ढांचा इस प्रकार को हो जिसके अन्तर्गत लक्ष्य-समूह में, निर्धारित साख राशि का सही सदुपयोग हो।

तृतीय, इन बैंकों के ब्याज दर ढांचे को विवेक सम्मत बनाते समय, कोषों की लागत को उचित महत्व दिया जाए।

चतुर्थ, इन बैंकों में ऐसे कर्मचारी हों जो ग्रामीण साख के सफल संचालन एवं लक्ष्यों की वास्तविक प्राप्ति हेतु निष्ठाएवं लगन के साथ अपने दायित्वों का निर्वाह कर सकें।

व्यावहारिक समाधान

भारतीय ग्रामीण बैंकिंग प्रणाली के महत्वपूर्ण पहलुओं पर विशेष विचार करने के उपरान्त, हमारी राय में इनमें संबंधित मुख्य समस्याओं का व्यावहारिक एवं सुसंगत समाधान निम्न बिंदुओं के आधार पर किया जा सकता है:

1. सम्पूर्ण देश को क्षेत्रीय आधार पर 15 प्रखण्डों में विभक्त कर प्रत्येक सुसंगठित क्षेत्र में, वहां कार्यरत बड़े एवं ग्रामीण समस्याओं में महारत हासिल-प्रायोजक बैंक की एक सहायक बैंकिंग कम्पनी की स्थापना की जाये। इस कम्पनी को उसकी स्वयं की शाखाओं के अतिरिक्त, अन्य सभी बैंकों की ग्रामीण शाखाओं का हस्तान्तरण कर, उसके संचालन एवं नियंत्रण का पूरा दायित्व सौंप दिया जाना चाहिए तथा प्रत्येक राज्यव्यापी लाभोन्मुखी शाखाओं का युक्तिसंगत आधार पर या तो विलीनीकरण अथवा समापन कर दिया जाना चाहिए।

2. बैंकिंग व्यवसाय की आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए, प्रत्येक राज्यीय ग्रामीण बैंक की प्रदत्त पूंजी कम से कम 50 करोड़ रुपये की रखी जाये ताकि वह अपने क्षेत्र विशेष में आने वाली व्यावसायिक जोखिमों का भली-भांति निर्वाह कर सके। इस प्रदत्त पूंजी में केन्द्र सरकार का अंशदान 35 प्रतिशत, नाबार्ड का 25 प्रतिशत, प्रयोजक बैंक का 20 प्रतिशत, संबंधित राज्य सरकार का 15 प्रतिशत एवं बैंक विशेष के कर्मचारीगणों का हिस्सा 5 प्रतिशत हो।

3. इन ग्रामीण बैंकों के पास पर्याप्त वित्तीय कोषों का प्रवाह बनाये रखने के लिए केन्द्र सरकार, नाबार्ड, राज्य सरकारें, प्रयोजक बैंकों तथा मौद्रिक/पूंजी बाजारों से यथोचित सहायता उपलब्ध करायी जाए। नाबार्ड की ओर से इन बैंकों के लिए न केवल "सुलभ खिड़की सुविधा" उपलब्ध कराई जाये बल्कि इन बैंकों को देय पुन र्वित कोष वाणिज्यिक बैंकों की दर से आधी दर पर मिलना चाहिए। इसी प्रकार डी.आई.सी.सी. द्वारा प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को दिये गए ऋणों पर ली जाने वाली बीमा प्रीमियम राशि भी, अन्य बैंकों की तुलना में आधी कर दी जानी चाहिए। यदि कोषों में वर्तमान कमी बनी रही तो लक्ष्य समूह तथा गैर-लक्ष्य समूह के लिए बैंकिंग व्यवसाय के लिए निर्धारित अनुज्ञात्मक सीमाएं, जो आज क्रमश: 60 प्रतिशत व 40 प्रतिशत हैं, बेमानी बनी रहेंगी।

4. ग्रामीण अधिशेषों को हस्तगत कर सकने की दृष्टि से, न केवल केन्द्रीय एवं राज्य सरकारें, स्थानीय पंचायतें एवं सरकारी उपक्रम, अपनी ओर से मदद उपलब्ध करें बल्कि स्थानीय अधिकारियों तथा प्रगतिशील ग्रामीण परिवारों के बीच प्रभावशाली संबंध स्थापित किये जायें ताकि प्रत्येक राज्य में जमा-संग्रहण, ऋण-आपूर्ति तथा लाभ की योजनाएं बनायी जा सकें।

5. उत्साहीन एवं उदासीन, बढ़ती उम्रवाले अध्यक्षों के स्थान पर, प्रायोजक बैंक इस पद पर ग्रामीण बैंकों में ऐसे योग्य

अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर भेजें अथवा स्थायी सेवा के लिए आकृष्ट करें जिनका सेवा काल कम से कम 10 वर्ष का शेष हो। अन्य कर्मचारियों का चयन भी उसी क्षेत्र विशेष से कम शैक्षणिक योग्यता (+2) के आधार पर किया जाये ताकि वे इन बैंकों में निरन्तर सेवारत रह सकें। चयनित कर्मचारियों को योग्यता/आवश्यकतानुसार राज्य स्तर अथवा जिला स्तर पर बुक-कीपिंग, व्यापार एवं कृषिगत पहलुओं का ''प्रवेश-प्रशिक्षण'' तथा रिफ्रेशर कोर्स दिया जाये ताकि वे इन बैंकों के लिए वास्तविक अर्थों में लाभदायक सिद्ध हो सकें।

6. इन बैंकों की अर्थक्षमता को सुदृढ़ बनाये रखने के लिए, यह आवश्यक है कि इन्हें ग्रामीण क्षेत्रों में साख संबंधी सभी बैंकिंग व्यवसाय करने की छूट दी जानी चाहिए। साथ ही, उनके कार्यों में आवश्यक विस्तार हेतु, इन्हें कृषिगत इन्पुटों के व्यापार एवं विपणन करने की सीमित अनुमति दी जानी चाहिए।

7. प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों में ऋण-प्रक्रिया में विद्यमान ''राजनीतिक हस्तक्षेप'' ने इस प्रणाली को तबाह कर दिया है। इसमें सुधार लाने हेतु, श्रेणियों को चयनित करने का दायित्व स्वयं बैंकों पर छोड़ दिया जाना चाहिए।

8. बैंकों की मोनिटरिंग-पद्धति की प्रभावहीनता के फलस्वरूप, ऋण-वसूली की स्थिति काफी बिगड़ चुकी है। अत: विभिन्न राज्यों में अधिनियमों के प्रावधानों को सख्त बनाये जाने के साथ-साथ, जानबूझ कर ऋण न चुकाने की प्रक्रिया को प्रज्ञेय अपराध घोषित कर दिया जाना चाहिए। फिर भी, यदि कहीं आवश्यकता समझी जाये तो इस कार्य के लिए ''विशेष न्यायालय'' गठित कर दिए जायें।

9. बैंक कर्मियों को अनुशासित बनाये रखने की दृष्टि से, औद्योगिक-विवाद अधिनियम में आवश्यक प्रावधान जोड़े जायें जिनके अन्तर्गत सरसरी तौर पर अनुशासनात्मक दण्ड दिया जा सके।

अन्त में, हमें इस कटु सत्य को स्वीकार करना है कि देश के ग्रामीण समाज में निर्धन वर्ग की विकासोन्मुख आवश्यकताओं को कम आंकना भारी भूल होगी। इस बढ़ते हुए वर्ग के लिए ऐसे सुदृढ़ एवं कार्यकुशल ग्रामीण बैंकों की आवश्यकता है जो न केवल उनकी समस्याओं से परिचित हों, बल्कि जिनमें उनके विश्वास को जीतने की क्षमता भी मौजूद हो। सरकार से ही ऐसे बैंकों के गठन एवं सफल संचालन की आशा की जा सकती है, किन्तु इसके लिए एक सुविचारित निर्णय, कारगर तथा समयबद्ध कार्य-योजना तथा उसका प्रभावी कार्यान्वयन ही हमें अपने अपेक्षित लक्ष्य तक पहुंचा सकता है।

सी-48, प्रियदर्शनी मार्ग,
तिलक नगर, जयपुर-302004

योग्यता का मापदण्ड क्या है?

✍ मीना हटवाल

जब कभी महिलाओं की समस्याओं और शोषण की बात की जाती है, तब अक्सर ग्रामीण महिला मजदूरों की समस्याओं को नजरअंदाज कर दिया जाता है। जबकि महिलाओं का यह वर्ग ही सबसे ज्यादा अन्याय का शिकार होता है। प्राय: उनसे बेगार में काम लिया जाता है और यदि पारिश्रमिक दिया भी जाता है तो पुरुषों की तुलना में बहुत कम। बांदा के गांव आऊ में एक खेतिहर महिला मजदूर के भांजे ने बड़े किसान (जमींदार) से कुछ रुपया उधार लिया और इसके एवज में उसके खेत पर बेगार में काम करने लगा। दो साल बीतने पर भी वह मूल नहीं चुका सका, हालांकि सूद यह मूल से ज्यादा चुका रहा था। अंतत: निराश होकर वह शहर भाग गया। उस बड़े किसान ने उसकी मौसी (जिसके साथ वह रहता था) को पकड़ बुलवाया। कर्जा चुकाने को कहा। महिला मजदूर द्वारा कर्ज न चुका पाने की मजबूरी बताने पर उसे भानजे के बदले बेगार काम करने को कहा गया। गांव में कोई भी उस महिला मजदूर का साथ देने को तैयार नहीं था। यहां तक कि उसके पति ने भी भानजे के बदले में पत्नी द्वारा बेगार कराने के फैसले को उचित ठहराया। गांवों के मजदूरों के लिए चाहे जो भी कानून बना दिये जाएं, लेकिन यह मानना ही होगा कि कानून की हद गांवों में और भी सीमित हो जाती है क्योंकि वहां के गरीब मजदूरों का भविष्य बड़े किसानों की खेती में खपाये गये श्रम के बदले में मिलने वाली मजदूरी पर टिका होता है। यदि वे खेतों में काम नहीं करेगा तो खायेगा क्या? मजदूरी उसे कानून के अनुसार नहीं मिलती है, बल्कि जितनी वहां के बड़े किसान देना तय करते हैं उतनी ही मिलती है।

गांव में औरत के श्रम का शोषण होता है। औरत होने के नाते कदम-कदम पर उसका अपमान होता है। सदियों से होते आ रहे उसके शोषण ने उसके अन्दर यह धारणा कूट-कूटकर भर दी कि वह औरत है इसलिए उसके साथ अन्याय होना स्वाभाविक है। वह अपने साथ होने वाले अन्याय का कभी विरोध नहीं कर पाती है। जबकि ग्रामीण महिलाएं खेतों में रोपाई, गुड़ाई और बीज बोने से लेकर फसल काटने तक में पुरुष को पूरा सहयोग देती है। औरत के सहयोग के बिना पुरुष खेती-बाड़ी की कल्पना तक नहीं कर सकता है। गौर करने की बात है कि चावल के खेतों और चाय-बागानों में अधिक काम महिलाएं ही करती हैं। इसके साथ ही जानवरों की देखभाल और बच्चों के पालन पोषण की जिम्मेदारी भी महिलाएं ही उठातीं है। इसके बावजूद उसको पुरुषों से कम मजदूरी दी जाती है। उसके शोषण का अंत यही नहीं होता है। छोटी-छोटी बातों पर पति की निर्दयतापूर्ण मारपीट को भी उसे ही सहना होता है। घरवालों द्वारा लिये गये कर्ज को न चुका पाने पर उसे बेगार में काम करने को मजूबर होना पड़ता है।

इसके अलावा जब कभी खेतिहर मजदूरों ने संघर्ष किया तो महिला मजदूरों ने उनको खुलकर सहयोग दिया। बिहार में कई वर्षों तक चलने वाले जन-आन्दोलनों में औरतों का योगदान सर्वविदित है। ऐसे आन्दोलन औरतों की सहभागिता के बगैर सफल हो ही नहीं सकते हैं। लेकिन वर्षों के योगदान के बाद जब आंदोलन सफल होते हैं, तब भी औरतों के साथ अन्याय होता है। उसे कुछ नहीं मिलता है। पुरुषों को जब आन्दोलन चलाना होता है, मोर्चा निकालना होता है तब वह औरतों को इसके लिए प्रेरित करते हैं। पर जब हक मिलता है, उस वक्त औरत दरकिनार कर दी जाती है। जैसे बिहार में लंबे आंदोलन के बाद भूमिहीन मजदूरों को जमीन दी गयी, मगर औरतों को नहीं दी गयी। सवाल उठता है कि उसे क्यों नहीं दी गयी जबकि संघर्ष में उसकी बराबर की भूमिका थी। यह बात अलग है कि औरतों ने इसके विरोध में आवाज बुलंद की तो उनमें से कुछ को जमीन दे दी गयी। यानि आदमियों को हक मिले इसके लिए तो वह सहयोग दे ही, किन्तु अपने हक के लिए दोबारा अलग से संघर्ष करे।

गांव की महिलाओं की प्रगति के संदर्भ में एक बात और बड़े जोर-शोर से कही जाती है कि गांव की महिलाएं तकनीकी रूप से काफी आगे बढ़ रही हैं क्योंकि वे धुआंरहित चूल्हे और गोबर गैस का उपयोग करने लगी हैं। यानी गांव की औरत की विज्ञान संबंधी प्रगति भी चौके-चूल्हे तक सीमित है। वहां के आदमी को प्रगति के नाम पर सिंचाई के आधुनिकतम साधन और ट्रैक्टर प्राप्त हुए पर औरत वहां आज भी ढेकली चला रही है। जहां ढेकली चलाना बंद हो गया है वहां यह काम करने वाली महिला मजदूर बेरोजगार हो गयी हैं। आखिर उन्हें 'पपिंग सैट' चलाने की तकनीक क्यों नहीं सिखाई जाती है? वह 'थ्रेशर' चलाना क्यों नहीं

सीख सकती है? उसे कभी भी इन्हें चलाने का तकनीकी ज्ञान नहीं दिया जाता है और उसकी विज्ञान की प्रगति का दम भरा जाता है। पपिंग सैट और थ्रेशर चलाने की तकनीक कोई भी सीख सकता है। जरूरत उचित प्रशिक्षण की है। यह उचित प्रशिक्षण आदमियों तक पहुंच सकता है तो गांव की औरत इससे क्यों वंचित रखी जाती है? इसी प्रकार पहाड़ में खेती महिलाओं द्वारा ही अधिक की जाती है। खेती में इतनी प्रगति के बावजूद वह आज भी सीढ़ीनुमा खेतों पर अथक श्रम और प्रयासों के बाद साल भर का अनाज नहीं जुटा पाती है। कृषि के क्षेत्र में हुई आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति पहाड़ों तक क्यों नहीं पहुंच पा रही है? उन्हें कभी भी अधिक फसल पैदा करने के उपाय बताने की जरूरत ही नहीं समझी जाती है।

कहने का अर्थ यह है कि जब कभी औरत की प्रगति और समस्याओं की बात की जाती है, तो अकसर ग्रामीण व महिला मजदूरों की समस्याओं को नजरअंदाज कर दिया जाता है। उनकी समस्याओं का थोड़ा बहुत जिक्र बतौर फैशन सेमिनारों में कर दिया जाता है पर ठोस हल कभी भी ढूढंने का प्रयास नहीं किया जाता है। जहां तक खेती के आधुनिकतम साधनों के उपयोग का सवाल है, तो उसके ज्ञान से उसे इसलिए वंचित रखा जाता है क्योंकि वह औरत है। उससे कहा भी जाता है कि यह सब औरतों का काम नहीं है। औरतों के प्रति अपनाए गये इस प्रकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन बहुत जरूरी है। औरतों में शिक्षा का प्रसार अधिकाधिक होना चाहिए। यदि औरत जन-आंदोलनों में कारगर भूमिका निभा सकती है, अपने बलबूते पर सारा परिवार पाल सकती है, मजदूरी कर सकती है तो तकनीकी जानकारी भी प्राप्त कर सकती है। इसके लिए उनका ग्रामीण या औरत होना आड़े नहीं आना चाहिए। योग्यता का मापदंड औरत या आदमी होना नहीं बल्कि प्रतिभा का होना है। इस बात को समझने की जरूरत है।

ए-320, सरोजिनी नगर,
नई दिल्ली

पृष्ठ 30 का शेष

विभिन्न ग्रुपों की रोजगार पद्धति का परीक्षण करने पर यह पता चला कि रोजगार के कुल कार्य दिवसों में आबंटियों, काश्तकार-भूस्वामियों, और मूलरूप में भूस्वामियों-कृषकों के मामले में क्रमश: 49 से 57, 51 से 60 और 52 से 69 प्रतिशत तक वृद्धि हुई। यह भी महसूस किया गया कि भूमि सुधारों के बाद सभी वर्गों के खाद्य पर कुल खर्च में पर्याप्त कमी आयी और शिक्षा पर खर्च में वृद्धि हुई, जिसे सर्वाधिक भूस्वामियों के मामले में 10.15 प्रतिशत आंका गया।

नीतिगत प्रभाव

परिणामों से पता चलता है कि ग्रामीण आर्थिक विकास के सभी पहलुओं पर निश्चित रूप से अनुकूल असर पड़ा है। विकास की वर्तमान स्थिति को सुचारु और स्थायी बनाने के लिए यह अनिवार्य है कि खेतों के और विखंडन को रोका जाए। इसके लिए खेत का एक न्यूनतम आकार निर्धारित कर दिया जाना चाहिए, साथ ही 20-25 वर्षों के बाद चकबन्दी कराई जानी चाहिए, वर्तमान राजस्व विभाग अन्य गतिविधियों में व्यस्त रहता है, अत: यह जरूरी है कि अलग से एक एंजेसी या संगठन बनाया जाए जो भूमि सुधारों को लागू करे।

बटाई पर खेतों के लेन-देन को बढ़ावा दिया जाना चाहिए ताकि खेती करने लायक भू-खंडों को कुछ परिवारों द्वारा जीविका के रूप में अपनाया जा सके। इसके लिए जरूरी है कि काश्तकारी संबंधी कानूनों में संशोधन किया जाए ताकि भूमि को बटाई पर देने में कोई जोखिम न रहे। अन्य लोगों को काम देने के लिए कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत ग्राम और कुटीर उद्योगों को विकसित किया जाना चाहिए। यह महसूस किया गया है कि आबंटियों को आबंटित भूमि का आकार बड़ा छोटा है और उस पर आधुनिक बीजों, उर्वरकों, कीटनाशकों आदि का समूचित इस्तेमाल संभव नहीं होता। अत: आबंटियों को यह सूझाव दिया जाता है कि उन्हें अपने खेतों को मिलाकर आपस में सहकारिता के आधार पर खेती करनी चाहिए। ऐसा करके वे उत्पादन की पूंजी से बहुत आधुनिक तकनीक का लाभ उठा सकेंगे। इससे कुल मिलाकर उनकी कृषि-आय में वृद्धि होगी।

अनुवाद : मंजुला भारद्वाज
जे.जी.-1/24, विकास पुरी,
नई दिल्ली-110018

सरकारी कार्यक्रम और ग्रामीण विकास

डॉ. राकेश अग्रवाल

हमारी अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होने के कारण योजनाकारों ने देश के सर्वांगीण विकास के लिए कृषि व औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने तथा रोजगार के अवसर सुनिश्चित करने पर अधिक बल दिया। प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास के लिए सिंचाईं और बिजली परियोजनाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। दूसरी योजना में आधारभूत एवं भारी उद्योगों द्वारा तीव्र औद्योगिकीकरण, रोजगार सुविधाओं में वृद्धि तथा आर्थिक विषमता में कमी के उद्देश्यों को निर्धारित किया गया। तीसरी योजना में खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता, इस्पात, रसायन, ऊर्जा तथा मशीनों के निर्माण से संबंधित आधारभूत उद्योगों का विस्तार तथा देश की जनशक्ति साधनों का पूर्ण उपयोग करने पर बल दिया गया। चौथी योजना के लक्ष्य थे विकास की गति को तेज करना, जनता के जीवन स्तर को ऊंचा करना तथा सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करना। पांचवी योजना देश को आत्मनिर्भरता प्रदान करने, मुद्रास्फीति पर नियंत्रण करने एवं गरीबी मिटाने के उद्देश्यों को लेकर बनायी गयी। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम तथा बीस सूत्री कार्यक्रम का संचालन किया गया। छठी योजना में ग्रामीण एवं लघु उद्योगों के साथ शिक्षा व स्वास्थ्य तथा ऊर्जा साधनों के विकास पर अधिक बल दिया गया। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या विकास की गति को कम कर देती है। अत: इस योजना में जनसंख्या पर नियन्त्रण के लिए विशेष उपाय किये गये। सातवीं योजना में गरीबी निवारण व रोजगार के अवसरों में वृद्धि के अतिरिक्त उत्पादकता बढ़ाने, ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को अपनाने तथा समाज सेवाओं में उन्नति करने के उद्देश्यों को शामिल किया। इस प्रकार अब तक सम्पन्न हुई सात पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से देश का आर्थिक व सामाजिक सभी क्षेत्रों में काफी विकास हुआ है। कृषि के विकास के लिए सरकार ने आधुनिक तकनीकों के प्रयोग को प्रोत्साहित करने के अलावा रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, उन्नत किस्म के बीजों तथा सिंचाई सुविधाओं का व्यापक विस्तार किया है जिसके परिणामस्वरूप स्वाधीनता प्राप्ति के बाद से अब तक कृषि उत्पादन में तीन गुना वृद्धि हुई है। देश खाद्यान्नों के मामले में आत्मनिर्भर हो गया है। इतना ही नहीं उद्योगों को कच्चा माल प्रदान करने वाली कृषि जिन्सों जैसे तिलहन, गन्ना, कपास, जूट आदि के उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है।

सरकार द्वारा स्थापित बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं ने देश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इन परियोजनाओं में भांखड़ा-नांगल, दामोदर घाटी, रिहन्द, चम्बल, राजस्थान नहर, कोसी, हीराकुन्ड, गण्डक, रामगंगा, बाण सागर, नार्गाजुन सागर, तुंगभद्रा, महानदी, फरक्का आदि प्रमुख परियोजनाएं हैं। इन परियोजनाओं से सिंचाई, परिवहन, बिजली उत्पादन, भूमि संरक्षण व बाढ़-नियंत्रण, मत्स्य पालन, पेय जल आदि का लाभ एक साथ प्राप्त होता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के इतने कम समय में इतनी बड़ी संख्या में इस प्रकार की बहुउद्देशीय परियोजनाएं किसी भी देश में नहीं बनायी गयीं।

हमारे देश का विकास गांवों के विकास से सीधे-सीधे जुड़ा हुआ है। महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत गांवों का देश है, यदि गांवों की कायापलट दी जाये तो समूचे राष्ट्र का विकास संभव हो सकेगा। वास्तव में गांव की खुशहाली में ही देश की खुशहाली निहित है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व ग्रामीण विकास की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया। जिस कारण हमारे गांव आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़े रहे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नियोजित आर्थिक विकास के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया गया है। गांवों के विकास के लिए सरकार द्वारा जो परियोजनाएं और कार्यक्रम अपनाये गये उनमें से प्रमुख परियोजनाएं व कार्यक्रम इस प्रकार हैं :-

सामुदायिक विकास परियोजना (1952), राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम (1953), खादी एवं ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम (1957), ग्रामीण आवासीय परियोजना (1957), बहुउद्देशीय अनुसूचित जनजाति विकास खण्ड कार्यक्रम (1957), पैकेज कार्यक्रम (1960), गहन जिला कृषि कार्यक्रम (1960), व्यावहारिक आहार कार्यक्रम (1962), ग्रामीण उद्योग परियोजना (1962), गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (1964), कृषक प्रशिक्षण एवं शिक्षा कार्यक्रम (1966), कुआँ निर्माण कार्यक्रम (1966), ग्रामीण जनशक्ति कार्यक्रम (1969), सूखा क्षेत्र पीड़ित कार्यक्रम (1970), ग्रामीण रोजगार नकदी योजना (1971), लघु कृषक विकास एजेन्सी (1971), जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम (1972), ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (1972), न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (1972), सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम (1973), विशेष दुग्ध उत्पादक कार्यक्रम (1975), बीस सूत्री कार्यक्रम (1975), काम के बदले में अनाज कार्यक्रम (1977), मरूभूमि विकास कार्यक्रम (1977), सम्पूर्ण ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979),

अन्त्योदय कार्यक्रम (1979), समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979), स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवा प्रशिक्षण कार्यक्रम, ट्राइसेम (1979), राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम (1980), नया बीस सूत्रीय कार्यक्रम (1982), ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (1983), ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (1983)। इनके अलावा सातवीं पंचवर्षीय योजना में 1985 से 1990 की अवधि में ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के लिए समन्वित ग्रामीण विकास योजना, इन्दिरा आवास योजना, ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम, अग्नि बीमा योजना, सामाजिक सुरक्षा कोष, सामूहिक बीमा योजना, जवाहर रोजगार योजना, जनसंख्या पर्यावरण सुधार परियोजनाओं का कार्यक्रम, जलधारा एवं कुटीर ज्योति कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में समय-समय पर इन परियोजनाओं, कार्यक्रमों तथा योजनाओं ने भारी योगदान किया है। इन कार्यक्रमों को और अधिक प्रभावी व गतिमान बनाने के लिए इन्हें पंचायती राज व्यवस्था से जोड़ने की योजना है। यों तो ग्रामीण विकास की सरकारी परियोजनाओं और कार्यक्रमों ने गांवों की प्रगति में आवश्यक भूमिका निभायी है, किन्तु अभी भी यह कहा जा सकता है कि कुछ कारणों से ग्रामीणों को इन परियोजनाओं तथा कार्यक्रमों का अपेक्षित लाभ नहीं मिल सका है। अधिकांश गांव वैज्ञानिक, तकनीकी एवं औद्योगिक प्रगति का समुचित लाभ नहीं उठा पाये हैं। आठवीं योजना में ग्रामीण विकास की गति को तीव्र करने के लिए विकास कार्यक्रमों को जिला, विकास खण्ड एवं ग्राम स्तर तक ले जाने का लक्ष्य है। प्रभावी क्रियान्वयन तथा जन सहयोग से ही यह लक्ष्य हासिल किया जा सकता है।

ग्रामीणों को स्वावलम्बी बनाने में सामुदायिक विकास परियोजनाओं की विशेष भूमिका रही है। इस परियोजना के मुख्य उद्देश्य थे- ग्रामीण जनता में प्रगतिशील दृष्टिकोण का विकास करना, सहकारी ढंग से काम करने की आदत डालना, उत्पादन तथा रोजगार में वृद्धि करना। सामुदायिक विकास परियोजना के इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए गांवों में शिक्षा के प्रसार, स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार, कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग, गृह निर्माण, वृक्षारोपण, भूमि सुधार, सड़क निर्माण आदि कार्यों पर जोर दिया गया। सामुदायिक विकास परियोजना एक बहुउद्देशीय कार्यक्रम है, जो ग्रामीणों के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं नैतिक उत्थान को प्रेरित करता है। पं. जवाहरलाल नेहरू सामुदायिक विकास परियोजनाओं को भारत की जगमगाती, जीवन से परिपूर्ण एवं गतिमान रोशनियां मानते थे, जिनसे शक्ति, आशा व उत्साह की किरणें फूटती हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए आधारभूत उद्योगों के साथ-साथ ग्रामीण लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर भी पर्याप्त बल दिया गया। बड़े उद्योगों में विकेन्द्रीकरण, वैज्ञानिक प्रबन्ध तथा आधुनिक तकनीकों को अपनाकर औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयत्न किये गये। औद्योगिक विकास को भारतीय परिवेश में गति देने के लिए वर्ष 1948 में औद्योगिक नीति की रचना की गई जिसमें वर्ष 1956, 1977 तथा वर्ष 1980 में आवश्यकतानुसार संशोधन किया गया। इन नीतियों के अन्तर्गत उद्योगों में विनियोग व उत्पादन क्षमता का विकास हुआ। परिणामस्वरूप विगत 40 वर्षों में औद्योगिक उत्पादन बढ़कर लगभग पांच गुना हो गया। इससे भारत ने औद्योगिक उत्पादन में विश्व में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया।

ग्रामीण लघु एवं कुटीर उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख अंग हैं। सरकार ने इस सत्य को दृष्टिगत रखते हुए लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पंचवर्षीय योजनाओं तथा औद्योगिक नीति में समुचित स्थान दिया। सरकार ने इन उद्योगों को करों में छूट, तकनीकी सहायता, वित्तीय सहायता तथा विपणन आदि की पर्याप्त सुविधाएं प्रदान की हैं। सरकार ने सैकड़ों वस्तुओं को लघु एवं कुटीर उद्योगों के लिए सुरक्षित कर दिया है। सरकार द्वारा लघु उद्योगों के क्षेत्र में सहकारिता को बढ़ावा दिया गया है जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक लोग लघु एवं कुटीर उद्योगों में संलग्न होकर रोजगार प्राप्त कर सकें।

वर्ष 1961-62 में सरकार द्वारा ग्रामीण औद्योगिक परियोजना प्रारम्भ की गयी जिसका उद्देश्य ग्रामीण वातावरण में लाभदायक औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की तकनीक विकसित करना रखा गया। इस परियोजना के अन्तर्गत स्थापित हजारों औद्योगिक इकाइयों में लाखों ग्रामीणों को रोजगार प्राप्त हुआ है। ग्रामीण औद्योगिक विकास में इस परियोजना ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

इस प्रकार विभिन्न सरकारी परियोजनाएं देश के सभी क्षेत्रों का विकास करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई हैं। विकास के और ऊंचे आयाम प्राप्त करने के लिए इन परियोजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन जरूरी है जिसमें अधिकारियों के अलावा स्वैच्छिक संगठनों तथा नागरिकों को भी सक्रिय सहयोग देना चाहिए।

प्रवक्ता, एस.एस.वी. (पो.ग्रे.) कालिज,

हिमदीप, राधापुरी,

हापुड़-245101 (उ.प्र.)

खाद्य प्रशोधन उद्योग का बढ़ता महत्व

डॉ. अभय कुमार मीतल

पिछले कुछ दशकों में भारतीय औद्योगिक पटल पर आय एवं रोजगार की दृष्टि से शहरी, ग्रामीण, संगठित एवं असंगठित प्रत्येक क्षेत्र में जिस तीव्रता से खाद्य प्रशोधन उद्योग का प्रसार एवं विकास हुआ है तथा राष्ट्रीय आय एवं निर्यात में इसकी भागीदारी में वृद्धि हुई है इसे दृष्टिगत रखकर विभिन्न उद्योग विशेषज्ञों एवं योजनाकारों ने इसे 'सूर्य के समान उदित उद्योग' की संज्ञा दी है। भारतीय औद्योगिकी के संदर्भ में इस उद्योग की महत्ता इसी से आकलित एवं विश्लेषित की जा सकती है कि सरकार के द्वारा इसके नियोजन, निरीक्षण एवं प्रोत्साहन के लिये एक पृथक मंत्रालय गठित किया गया है। इस मंत्रालय द्वारा जिन उद्योगों को खाद्य प्रशोधन उद्योगों के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है उनकी एक लम्बी सूची है। प्रमुख रूप से फल, सब्जियां एवं उनके प्रशोधन सम्बधित उद्योग, मीट, मुर्गी फॉर्म एवं डेरी उत्पादन, मछली एवं गहन समुद्र संबंधी उत्पाद, कन्फैक्शनरी, बिस्कुट एवं बेकरी उत्पाद, शहद, शक्कर एवं चीनी, चॉकलेट, प्रशोधित तेल, मदिरा, सिरका आदि को मंत्रालय ने अपनी सूची में सम्मिलित किया है। इन सभी को किसी न किसी रूप में संसाधित कर विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है।

अधिक लोगों को रोजगार

सन् 1992 में इस उद्योग में लगभग 23000 करोड़ रुपये का विनियोग किया गया जो उद्यमियों एवं विनियोगकर्ताओं का इसके प्रति रुझान प्रकट करता है। यही नहीं एक अनुमान के अनुसार लगभग तीन लाख साठ हजार व्यक्तियों को इस उद्योग के माध्यम से रोजगार प्राप्त हैं। इसके अतिरिक्त मंत्रालय द्वारा इस वर्ष फल प्रशोधन उत्पादन के 1075 एवं निर्यात प्रमुख 91 प्रस्तावों को स्वीकृत किया गया है। आधुनिक चावल मिलों की संख्या गत वर्ष की तुलना में 4219 से बढ़कर 32,969 हो गयी है। गत वर्ष की तुलना में खाद्य प्रशोधन उद्योग के निर्यात योगदान में 27 प्रतिशत की वृद्धि आकलित की गई जबकि कुल निर्यात 1445 करोड़ रुपये रहा। समुद्री उत्पादों के संबंध में यह निर्यात 1365 करोड़ रुपये रहा जबकि वृद्धि दर गत वर्ष की तुलना में 50 प्रतिशत रही।

अर्थव्यवस्था में अधिक योगदान

स्वयं सरकार एवं खाद्य प्रशोधन मंत्रालय भी अर्थव्यवस्था के प्रति इस उद्योग के बढ़ते हुए योगदान को देखते हुए इसकी प्रगति एवं विकास हेतु अत्यंत सजग एवं जागरूक है। वर्तमान समय में औद्योगिक एवं राजकीय दोनों ही दृष्टियों से खाद्य प्रशोधन उद्योग को प्राथमिक उद्योग का दर्जा प्राप्त है। मंत्रालय ने इस उद्योग में लगे विनियोग एवं उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से लगभग सभी संलग्न उद्योगों को गैर लाइसेंसीकृत (मदिरा, बीयर, गहन समुद्र संबंधी प्रशोधिक उत्पाद आदि को छोड़कर) करने की नीति घोषित की है। उद्योग के विभिन्न उत्पादों को उत्पाद-कर एवं कस्टम-ड्यूटी से मुक्त करना इस दिशा में मंत्रालय का द्वितीय महत्वपूर्ण कदम है। सरकार ने मशरूम के संसाधित उत्पादों के प्रोत्साहन हेतु जहां एक योजना तैयार की है वहीं राज्य सरकार की संलग्नता बढ़ाने हेतु भी मंत्रालय ने एक अभियान प्रारंभ किया है। लघु उद्योग सेवा संस्थान द्वारा भी निरन्तर खाद्य प्रशोधन उद्योग की प्रगति हेतु विकास कार्यक्रम की श्रृंखला संचालित की जा रही है।

निष्कर्ष रूप में खाद्य प्रशोधन उद्योग को "फार्म एवं उद्योग के संयोजन" की संज्ञा के रूप में देखा जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों में इस उद्योग ने भारतीय औद्योगिक क्षेत्र के विकास, राष्ट्र के आर्थिक विकास एवं निर्यात संवर्धन में निश्चय ही महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय भूमिका अदा की है।

वाणिज्य विभाग
साहू जैन (पी.जी.) कालेज,
नजीबाबाद (उ.प्र.) - 246763

ग्रामीण विकास में लोगों की भागीदारी

डॉ. विशाल सिंह

भारत की लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। इसी कारण स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार एवं प्रशासन ने मुख्य उद्देश्य गांवों के विकास को माना। इसके लिए अनेक योजनाएं बनीं, जैसे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम, लघु एवं सीमान्त कृषकों के लिये उत्पादन बढ़ाने का कार्यक्रम, अनुसूचित जन जाति के लिये योजना, ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम आदि। इन योजनाओं की क्रियान्विति भी हुई और इनमें से बहुत सी योजनाएं अब अपनी अवधि पूर्ण कर समाप्त भी हो चुकी हैं। किन्तु यदि वास्तविक मूल्यांकन किया जाये तो यही पता चलेगा कि इन योजनाओं में केवल आंकड़ों की पूर्ति पर ही अधिक बल दिया गया। वांछित लक्ष्यों को हासिल करने में लगभग ये सभी योजनाएं आंशिक रूप में ही सफल रही हैं। जिसका एक बड़ा कारण यह रहा है कि जितनी योजनाएं बनी हैं वे सामान्यत: जनता पर थोपी गई हैं। जिन लोगों के लिये ये योजनाएं बनाई गईं थीं उनकी इसके बारे में सहमति अथवा सुझाव लेना तो दूर, उन्हें वस्तुगत जानकारी देने का भी प्रयास योजना बनाने से पहले कभी नहीं किया गया।

आजादी के बाद 45 वर्षों में भारतीय ग्रामों में तरक्की अवश्य हुई है, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता। गांवों में बिजली, सड़क, स्वास्थ्य सुविधाओं हेतु अस्पताल, शिक्षा हेतु विद्यालय खुल गये है। इनका लाभ भी ग्रामीण उठा रहे हैं। किन्तु जो मूल-भूत प्रश्न विचारणीय है वह यह है कि अभी भी लोगों की आदतों, विश्वासों तथा विचारों में परिवर्तन नहीं आ पाया है और यही एक सबसे बड़ा कारण है कि हमारे ग्रामीण विकास की तस्वीर अभी भी बहुत धुंधली है। आज भी गांवों में महिलाओं के शिक्षा स्तर, स्वास्थ्य स्तर तथा वैचारिक स्तर में कोई विशेष बदलाव नहीं आया है। बाल विवाह की प्रवृत्तियां राजस्थान जैसे राज्यों में आम पाई जाती हैं, परिणाम अधिक मातृ एवं शिशु मृत्यु दर का होना स्वाभाविक है।

हमारे समाज का जातिगत ढांचा आज भी लगभग वही बना हुआ है जो आज से सैंकड़ों वर्ष पूर्व था। पहले तो इस जातिवाद का कोई तार्किक आधार कर्म भी था किन्तु आज तो इसके पीछे कोई ऐसा आधार भी नहीं है।

इसके अतिरिक्त सबसे अधिक महत्वपूर्ण जो बिन्दु है वह यह है कि भारत के विकास की तस्वीर का जो प्रारूप हमारे विकास कर्ताओं एवं परिवर्तनकर्ताओं ने बनाया उसमें लोगों की भागीदारी का सामान्य अभाव रहा है। क्रियान्वयन के स्तर पर तो इसकी और भी अधिक आवश्यकता थी किन्तु इस स्तर पर सभी कार्यक्रमों को थोपने का ही प्रयास अधिक रहा। यदि आम जनता को इन विकास कार्यक्रमों में सहभागी बनाया जाता तो शायद हम अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में अधिक सफल होते।

किसी भी योजना को लागू करने से पूर्व हमें उसकी 'आवश्यकताओं' तथा 'परिणामों' के बारे में विचार करना चाहिए अर्थात् आम जनता को कार्यक्रम की आवश्यकताओं और उसमें लाभों के बारे में तथा उसे लागू करने में उनकी स्वयं की भूमिका के बारे में उन्हें बताया जाना चाहिए तथा उनकी भागीदारी को निर्धारित किया जाना चाहिए। उन्हें इस भागीदारी और भूमिका का अहसास कराया जाना चाहिए। तभी कार्यक्रम उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं तथा अपने वांछित लक्ष्यों को पा सकते हैं। तभी सच्चे अर्थों में विकास हो सकता है। अन्यथा तो ये सारे कार्यक्रम असफल कार्यक्रमों की श्रृंखला को बढ़ाते जायेंगे और मानव-मन सदैव ही कामना करता रहेगा कुछ न कुछ पाने की, किसी और से, न कि स्वयं कुछ प्रयास करेगा।

भारतीय ग्रामीण प्रबन्ध संस्थान

6/7, कल्याणपथ,

पुलिस मेमोरियल अस्पताल के पास,

जयपुर

ग्रामीण निर्धनता - एक चुनौती

✍ अलका कुशवाहा

भारत के पिछड़ेपन एवं दरिद्रता को ढकने के लिए हम अपने देश को विकासशील देश कहना पसन्द करते हैं क्योंकि यह शब्द गरिमायुक्त और विकास की ओर बढ़ने का संकेत करता है। किन्तु इस तथ्य को छुपाया नहीं जा सकता कि भारत बहुत निर्धन एवं पिछड़ा हुआ देश है। विकासशील देशों के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने और काम करने वाली एक विशाल जनसंख्या को इसके महत्व एवं आर्थिक रूप से उपेक्षित क्षेत्र की तरफ किसी को भी देखने को विवश करती है। निश्चित रूप से इन क्षेत्रों में निर्धनता और पिछड़ेपन को दूर करने के लिए विस्तृत रूप से विकास योजनाओं को ग्रामीण स्तर पर लागू किये जाने की आवश्यकता है। भारत जैसे ग्रामीण जनसंख्या प्रधान देश में ग्रामीण विकास और गांवों में गरीब लोगों की दुर्दशा एक गंभीर चिंता का विषय है। भारत की 74.28 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है जिसमें 30 प्रतिशत आबादी गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करती है। इस संदर्भ में ग्रामीण निर्धनता को दूर करना ग्रामीण विकास की एक अनिवार्य एवं तर्कसंगत दिशा है।

भारत के सात लाख गांव जब तक निर्धनता, बेराजगारी, भुखमरी और आवासहीनता के शिकार बने रहेंगे तब तक सही अर्थों में विकास की प्रक्रिया पूरी नहीं हो सकती। यह एक विरोधाभास है कि स्वतंत्रता के पश्चात् एक ओर देश में बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना, नवीन टेक्नोलॉजी, शहरीकरण, विद्युतीकरण एवं विश्वविद्यालय स्थापित किये गये, वहां दूसरी ओर निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। निर्धनता का आशय उस सामाजिक प्रक्रिया से है जिसमें समाज का एक बड़ा भाग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरी नहीं कर पाता है। ग्रामीण गरीब के अन्तर्गत लघु व सीमान्त कृषक, बटाईदार, भूमिहीन श्रमिक तथा ग्रामीण दस्तकार आते हैं।

ग्रामीण गरीबों को आय की दृष्टि से चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम श्रेणी के अंतर्गत वे गरीब आते हैं जिनकी वार्षिक पारिवारिक आय 6400 से 4800 रुपये के बीच होती है। द्वितीय श्रेणी के अंतर्गत 4800 से 3500 रुपये के बीच वार्षिक पारिवारिक आय के लोग आते हैं। तृतीय श्रेणी के अंतर्गत 3500 से 2250 रुपये एवं सबसे गरीब अर्थात् 2250 रुपये से कम वार्षिक पारिवारिक आय के लोग है। मशीनीकरण की प्रक्रिया के कारण ग्रामीण दस्तकार, लुहार, कुम्हार एवं बुनकर इत्यादि भूमिहीन एवं खेतिहर मजदूर बनते जा रहे हैं। मजदूरों को प्राय: 10 से 15 रुपये प्रतिदिन मजदूरी मिलती है। वर्ष में वे 150 से 200 दिन की मजदूरी करते हैं और बाकी समय वे बेकार रहते है। वे दो वक्त की रोटी का जुगाड़ नहीं कर सकते।

प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर आठवीं पंचवर्षीय योजना तक ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता को दूर करने के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाएं चलाई गयीं। पिछले 10 वर्षों में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम पर सरकार द्वारा लगभग 25,000 करोड़ रुपये खर्च किए गए। इन कार्यक्रमों से मूल प्रश्न यह उठता है कि कितने गरीब अभाव की जिन्दगी से ऊपर उठ सके है? गरीबी निवारण योजना में कुछ ही गरीब परिवारों को ऋण उपलब्ध करवाकर या मजदूरी देकर उनको गरीबी रेखा से ऊपर उठा मान लेते हैं। निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों, गरीबों की आवश्यकताओं एवं सेवाओं की आपूर्ति में समन्वय आवश्यक है।

योजनाओं के ढांचे में आमूल परिवर्तन लाये बिना गरीबों के हितों की नीतियों का पालन संभव नहीं है। गांव की झोपड़ियों में जीवन यापन करने वाले भूखे, नंगे, निरक्षर एवं स्वास्थ्यहीन मानव की आवश्यकताओं को आधार मानकर योजनाएं बनानी होंगी। गांवों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों तथा समस्याओं के आधार पर गांवों के विकास का ढांचा खड़ा करके उन्हें आत्मनिर्भर बनाने से ही समस्याओं का समाधान संभव हो सकेगा। साथ ही इस तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है कि गरीबी की जो रेखा निर्धारित की गयी है, वह मात्र जीवित रहने तक ही सीमित न रहकर उन्हें कार्यक्षम बनाने में भी सक्षम हो सके, ऐसे कार्यक्रम बनाये जाएं।

शोध छात्रा, बी.एच.यू.
बी-361/21 ए-3, ब्रह्मानंद कालोनी,
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी-221005

पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि विकास की सम्भावनायें एवं सुझाव

डॉ. नवीन चन्द्र त्रिपाठी

पर्वतीय क्षेत्रों की विशिष्ट भौगोलिक परिस्थितियां होने के कारण कृषि भी मैदानी क्षेत्रों की अपेक्षा भिन्न है। क्षेत्र की ऊंचाई, ढाल की दिशा तथा हिमालय से दूरी के अनुसार पर्वतीय क्षेत्रों में जलवायु बदलती जाती है। परिणामस्वरूप, कृषि का स्वरूप भी बदल जाता है। इसके अतिरिक्त ढालदार भूमि, भूक्षरण की समस्या तथा वर्षाधीन खेती, पर्वतीय कृषि की मुख्य समस्याएं है। कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का मात्र 12.5 प्रतिशत कृषि के अन्तर्गत होने के कारण अधिकांश कृषक लघु एवं सीमान्त श्रेणी में आते हैं। 87.7 प्रतिशत जोतों का आकार 2 हेक्टेयर से छोटा है। कुल कृषि क्षेत्रफल का लगभग 60 प्रतिशत मध्यम ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों (1200 से 1700 मीटर) के अन्तर्गत आता है जो अधिकांश असिंचित है लेकिन खाद्यान्न उत्पादन की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है । इन क्षेत्रों की प्रमुख फसलें धान, मडुंवा, झंगोरा, गेहूं, आलू, तोरिया, गहत इत्यादि हैं तथा इन क्षेत्रों का प्रचलित द्विवर्षीय फसल चक्र मंडुवा-परती-धान/झंगोरा-गेहूं हैं। निचली सिंचित घाटियों में धान-गेहूं फसल चक्र प्रचलित है तथा इस फसल चक्र की उत्पादकता मध्यम ऊंचाई वाले क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक है। ऊंचे क्षेत्रों में (1700 मीटर से अधिक) नकदी फसलें जैसे रामदाना, आंगल, राजमा, आलू इत्यादि अधिक क्षेत्र में उगायी जाती हैं।

पर्वतीय क्षेत्र की विशेष, परिस्थितियों एवं जटिल कृषि समस्याओं के बावजूद यहां पर कृषि विकास की अपार सम्भावनाएं हैं। पर्वतीय कृषि को विकसित करने के लिए निम्नलिखित सुझावों पर अमल करना आवश्यक है।

1. फसलों की उन्नत किस्मों का प्रयोग:

पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकांश कृषकों द्वारा फसलों की स्थानीय किस्मों का प्रयोग किया जाता है जिनमें बीमारी एवं कीड़ों का प्रकोप अधिक होता है। यदि स्थानीय किस्मों को उन्नत किस्मों द्वारा बदल दिया जाय तो उपज में बहुत बढ़ोतरी की जा सकती है। पर्वतीय क्षेत्रों के लिए मुख्य फसलों की संस्तुत किस्में निम्न प्रकार हैं :

धान (असिंचित) - बी.एल. 206, बी.एल.163 एवं मझेरा-3

धान (सिंचित) - पंत धान - 11, पंत धान-6, गोविन्द

गेहूं (शीघ्र बोआई हेतु) - बी.एल.-616, एच.एस.-277

गेहूं (समय से बोआई) - बी.एल. - 421, एच.एस.-240, एच.डी.-2380, यू.पी.-1109

गेहूं (देर से बोआई) - सोनालिका, एच.डी - 2285 एवं एच.एस.-295

मडुंवा - बी.एल.-204, बी.एल-214, बी.एल.-149 एवं पंत मडुंवा-3

मादिरा - बी.एल.-8, बी.एल.-29 एवं बी.एल.-21

रामदाना - अन्नपूर्णा

मक्का - बी.एल.-16, नवीन, कंचन

सोयाबीन - पी.के.-564, पी.के.-416 एवं ब्रैग

मसूर - बी.एल.मसूर-1, बी.एल.मसूर-4, पंत एल.-234, पंत एल.-406

तोरिया - टाईप-9, पी.टी. - 30, पी.टी.-303

गहत - बी.एल. गहत-1

राजमा - बी.एल.-63, पी.डी. आर.-14

2. फसल चक्र में परिवर्तन

पर्वतीय कृषि में एक बहुत भारी कमी जो देखने में आती है, वह है द्विवर्षीय परम्परागत फसल चक्र- "मंडुवा-परती-धान-गेहूं" का अधिकांश कृषकों द्वारा अपनाया जाना। इस फसल चक्र में मंडुवा को फसल काटने के बाद, रबी में खेत की परती में छोड़ दिया जाता है। पर्वतीय क्षेत्र में, वैसे ही जोत का आकार बहुत कम है। यहां पर लगभग 71 प्रतिशत जोतों का आकार एक हेक्टेयर से कम है। इसलिए खेत को परती छोड़ना बिल्कुल भी उचित नहीं है। इस फसल चक्र की दूसरी कमी यह है कि किसानों द्वारा असिंचित दशा में धान की खेती की जाती है जबकि यह सर्वविदित है कि धान अधिक पानी चाहने वाली फसल है। इस फसल को असिंचित दशा में बोये जाने का कोई औचित्य नहीं है। धान की बोआई मार्च-अप्रैल में की जाती है, इस कारण मंडुवा की फसल काटने के बाद खेत को परती में छोड़ दिया जाता है। यदि कृषक इन कमियों पर ध्यान दें और अपने फसल चक्र में

थोड़ा परिवर्तन कर वर्ष में दो फसलें लेना प्रारम्भ कर दें तो खेती में काफी सुधार हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों में भूमि उपयोग एवं खेती में सुधार लाने के लिये फसल चक्र में परिवर्तन लाना अत्यन्त आवश्यक है। यह कार्य आसानी से सम्भव भी है। यदि सोयाबीन गेहूं या रामदाना-गेहूं जैसे एक वर्षीय फसल चक्र को अपनाया जाए तो प्रति इकाई क्षेत्र से उत्पादन एवं आर्थिक लाभ में काफी हद तक वृद्धि की जा सकती है। परीक्षणों में यह पाया गया है कि यदि परम्परागत फसल चक्र ही अपनाना हो तो भी परती भूमि का उपयोग तोरिया, सब्जी वाली मटर या चारे हेतु जई उगाकर किया जा सकता है।

3. दलहनी एवं तिलहनी फसलों को प्राथमिकता

पर्वतीय क्षेत्र अधिकांशत: बारानी है। ऐसे क्षेत्रों में दलहन एवं तिलहन वाली फसलों का विशेष महत्व है क्योंकि इन फसलों की जड़ें जमीन की गहरी सतहों से नमी एवं पोषक तत्वों का प्रयोग कर उत्पादन बढ़ाने में सहायक होती हैं। दलहनी फसलें तो वायुमण्डल से नत्रजन लेकर स्वयं पोषण के साथ-साथ भूमि में नत्रजन एकत्र कर लेती हैं जिससे आगामी फसल भी अच्छी होती है। पर्वतीय क्षेत्रों को विशिष्ट जलवायु में, दलहनी फसलों में मैदानी क्षेत्रों की अपेक्षा कीट एवं बीमारियों का प्रकोप कम होता है। सोयाबीन, राजमा, कुल्थी आदि पर्वतीय क्षेत्रों की ऐसी फसलें हैं जिनका उत्पादन पहाड़ में मैदानी क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक होता है। परम्परागत पिछड़ी खेती में जहां उर्वरक का प्रयोग न के बराबर है, दलहनी फसल ही भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने में सहायक सिद्ध हो सकती है। साथ ही दलहनी एवं तिलहनी फसलें उगाकर प्रति इकाई क्षेत्र से मिलने वाले लाभ को धान्य फसलों की अपेक्षा अधिक मात्रा में लेना संभव है।

4. कृषि में उन्नत तौर तरीकों का प्रयोग

कृषि का विकास तभी सम्भव है जब सभी उन्नत तौर तरीकों को अपनाया जाए। खेती से अधिकतम उत्पादन लेने के लिये फसल की बोआई से लेकर कटाई तक पूरी देख रेख तथा उन्नत तौर तरीकों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इस तथ्य के विपरीत, वर्तमान में किसान, बोआई के बाद कटाई करने ही खेत में जाते हैं। यही कारण है कि पर्वतीय क्षेत्रों में, कृषि पिछड़ी हुई है। सही बीज एवं किस्म का चुनाव, समय पर सही विधि से बोआई, सही विधि से गोबर की खाद बनाना, संतुलित मात्रा में उर्वरक प्रयोग, समय पर टाप ड्रैसिंग, कीट एवं बीमारी नियंत्रण इत्यादि ऐसी सस्य विधियां हैं, जिनका योगदान पैदावार में होता है। इसलिये सभी कृषि विधियों को अपनाना आवश्यक है।

5. बारानी क्षेत्रों में विशेष ध्यान देना आवश्यक

पर्वतीय क्षेत्र अधिकांश बारानी होने के कारण कृषि विकास के लिये यह आवश्यक है कि ऐसे क्षेत्रों में विशेष ध्यान दिया जाए। बरानी खेती के लिये कुछ विशेष सस्य विधियां समय-समय पर संस्तुत की जाती हैं। कृषकों को चाहिए कि उन पर गम्भीरता से विचार कर अमल करें। उदाहरण के तौर पर असिंचित क्षेत्रों के लिये संस्तुत किस्में, बोआई के समय भिगोकर बीज बोना, समय पर खरपतवार नियंत्रण आदि ऐसी सस्य विधियां हैं जो उत्पादन बढ़ाने में अत्यन्त सहायक सिद्ध होती हैं। असिंचित क्षेत्रों में किसानों की आम धारणा है कि उर्वरक के प्रयोग से फसल खराब हो जाती है। यह धारणा सही नही है क्योंकि परीक्षणों एवं प्रदर्शनों से यह साबित हो चुका है कि उर्वरक प्रयोग द्वारा फसल की पैदावार में 50 प्रतिशत वृद्धि की जा सकती है। अखिल भारतीय स्तर पर सम्पन्न किये गये बारानी दशा में परीक्षणों के परिणाम से पता चलता है कि विभिन्न कृषि निवेशों एवं प्रबन्ध तकनीकों को अपनाकर परम्परागत तौर तरीकों की अपेक्षा फसलों की उपज में बहुत अधिक वृद्धि की जा सकती है।

6. बेमौसमी सब्जी उत्पादन

मध्यम एवं अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में (1500 मीटर से ऊंचे क्षेत्रों में) बेमौसमी सब्जी बोकर पर्वतीय परम्परागत फसलों की अपेक्षा कई गुना अधिक लाभ कमा सकते हैं। गढ़वाल मण्डल में चम्बा-मसूरी फल पट्टी के कृषक इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। बेमौसमी सब्जियों में मटर का प्रमुख स्थान है। वैसे तो गोभी, टमाटर व अन्य सब्जियां भी बेमौसम में उगायी जा सकती हैं तथा उगायी जाती हैं लेकिन सब्जी वाली मटर साल में दो बार ली जा सकती है। पहली फसल अगस्त से अक्टूबर तथा दूसरी जनवरी से अप्रैल तक। दोनों ही फसलें ऐसे समय में तैयार होती हैं जब मैदानी क्षेत्रों में मटर बिल्कुल भी नहीं होती है। अक्टूबर एवं अप्रैल माह में मटर का बाजार भाव, बेमौसमी मटर की अपेक्षा चार से पांच गुना अधिक मिलता है। इस प्रकार पर्वतीय कृषक अपने क्षेत्र की विशेष जलवायु का भरपूर लाभ उठा सकते हैं। सब्जी से प्राप्त धनराशि से, कृषक अपनी पारिवारिक खाद्यान्न की आपूर्ति के साथ-साथ आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकते हैं।

गो.ब.पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
कृषि विज्ञान केन्द्र, पर्वतीय परिसर,
रानी चौरी, वाया चम्बा,
टिहरी गढ़वाल, उ. प्र.-249199

साक्षरता की ओर बढ़ता हुआ यमुनानगर

✍ जे. पी. सिंह

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहां की 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। ग्रामीण इलाकों में इतनी बड़ी संख्या में रहने वाले लोगों के आर्थिक, सामाजिक व शैक्षिणिक विकास के लिए केन्द्र व राज्य सरकारें अनेक विकास व कल्याण योजनाएं बनाती हैं। परन्तु निरक्षरों की निरन्तर बढ़ रही संख्या के फलस्वरूप आम आदमी इन योजनाओं का लाभ उठाने से वंचित रह जाता है। दुनिया के आधे निरक्षर लगभग 43 करोड़ लोग और 15 से 35 आयु वर्ग के लगभग 11 करोड़ लोग भारत में ही बसते हैं। जिनमें से अधिकांश निरक्षर लोग हिन्दी भाषी प्रदेशों में रहते हैं। आम जनता को अनपढ़ता के इस अभिशाप से मुक्त करवाने तथा उन्हें बुनियादी शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध करवाने के लिए राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने देशव्यापी साक्षरता अभियान चला रखा है। हरियाणा राज्य के यमुनानगर जिले में पूर्ण साक्षरता अभियान अपनी चरम सीमा पर है।

यमुना नदी के तट पर बसा यमुनानगर जिला पहली नवम्बर 1989 को अम्बाला से अलग होकर पृथक जिले के रूप में अस्तित्व में आया। एक उपमण्डल, दो तहसील, 5 खंड, 654 गांवों, 405 पंचायतों तथा 7 नगरपालिका क्षेत्रों वाले इस जिले की कुल जनसंख्या 8.18 लाख है। किसी भी देश व राज्य के आर्थिक, सामाजिक एवं संतुलित विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर इस जिले में 346 प्राथमिक स्कूल, 70 माध्यमिक स्कूल, 101 उच्च तथा उच्चतर माध्यमिक स्कूल तथा 8 कालेज कार्यरत हैं। इस जिले की साक्षरता 61 प्रतिशत है जबकि हरियाणा की 55.33 तथा राष्ट्रीय स्तर पर इसका प्रतिशत 52.11 है।

साक्षरता अभियान का शुभारम्भ

आज से दो वर्ष पूर्व राष्ट्रीय साक्षरता मिशन द्वारा बुनियादी शिक्षा एवं साक्षरता के सर्वत्रीकरण के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साक्षरता परियोजनाएं समस्त देश में शुरू की गयीं। यमुनागर में भी निरक्षरों को साक्षर बनाने के लिए अभियान का शुभारम्भ 19 मई 1990 को हरियाणा के राज्यपाल श्री धनिकलाल मंडल ने किया। अभियान के पहले चरण में 45 गांवों का चयन किया गया तथा प्रत्येक खण्ड के नौ गांवों को इस कार्यक्रम के लिए अंगीकृत किया गया। इस अभियान के उत्साहवर्धक परिणामों को देखते हुए इस वर्ष सारे जिले में शत-प्रतिशत साक्षरता के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए व्यापक कार्यक्रम चलाने का प्रारूप तैयार किया गया और इसका दायित्व सौंपा गया 'जिला साक्षरता समिति-ज्योति पुंज' को। उपायुक्त यमुनानगर की अध्यक्षता में गठित इस 40 सदस्यीय संस्था की कार्यकारिणी में सरकारी अधिकारियों, विभिन्न स्वैच्छिक संस्थाओं के अध्यक्षों, शिक्षण संस्थाओं के प्रधानाचार्यों, समाज सेवा में लगे समाज सेवियों आदि को शामिल किया गया है।

पूर्ण साक्षरता अभियान को प्रभावी ढंग से चलाये जाने के लिए गांवों में कार्यरत सरकारी कर्मचारियों तथा विभिन्न संस्थाओं द्वारा एक व्यापक सर्वेक्षण करवाया गया ताकि निरक्षरों की सही स्थिति का आकलन किया जा सके। सर्वेक्षण से पता लगा कि इस जिले में 9 से 45 वर्ष की आयु के कुल निरक्षरों की संख्या 1,50,825 है। इस अभियान के अन्तर्गत जिले को जगाधरी शहर व ग्रामीण, यमुनानगर शहर, बिलासपुर, सढ़ौरा, रादौरा तथा छछरौली 7 जोनों में विभक्त किया गया। प्रत्येक जोन को 6 से 8 सेक्टरों में विभाजित किया गया। सैक्टरों को कलस्टरों में विभक्त किया गया तथा इस क्षेत्र के उच्च, माध्यमिक वं प्राथमिक स्कूल के मुख्य अध्यापकों को इन कलस्टरों का प्रभारी तैनात किया गया। प्रत्येक कलस्टर में एक या दो गावों को शामिल किया गया। इस तरह पूरे जिले को 7 जोनों, 40 सैक्टरों तथा 600 कलस्टरों में विभाजित किया गया। गैर सरकारी स्तर पर खण्ड एवं पंचायत स्तरीय समितियों का भी गठन किया गया जो लोगों को प्रोत्साहित तथा प्रेरित करने में महत्वपूर्ण जानकारी दे रही हैं।

उपयुक्त वातावरण का निर्माण

पूर्ण साक्षरता अभियान की सफलता के लिए बहुत आवश्यक है कि सबसे पहले निरक्षरों के मन में पढ़ने की लालसा जाग्रत की जा सके तथा उनके अन्दर आत्मविश्वास की भावना को बलवती बनाया जा सके कि पढ़ने की कोई उम्र नही तथा ज्ञान ही एक मात्र ऐसा हथियार है जिससे गरीबी, शोषण तथा बेइंसाफी का मुकाबला किया जा सकता है। इसलिए साक्षरता कक्षाएं शुरू करने से पूर्व यह बहुत जरूरी था कि जिले में साक्षरता के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण किया जाये। वातावरण निर्माण के लिए प्रभावी कार्यक्रम बनाया गया और सात कला जत्थों का गठन किया गया। प्रत्येक कला-जत्थे में दस लोगों को नियुक्त किया

गया। कला-जत्थों के इन सदस्यों को लोगों को प्रेरित करने के लिए साक्षरता गीतों, समूह-गानों, नुक्कड़ नाटकों आदि की विशेष ट्रेनिंग दी गई ताकि ग्रामीण इलाकों में साक्षरता का व्यापक प्रचार हो सके तथा इस प्रकार का वातावरण तैयार हो जाए कि शीघ्र ही साक्षरता कक्षायें शुरू की जा सकें। शहरों में महिला कामगारों, घरेलू नौकरानियों तथा उद्योगों में सेवारत महिलाओं को साक्षर बनाने के कार्य का बीड़ा उठाया यमुनानगर शहर की महिलाओं और लड़कियों ने। उन्होंने कला-जत्थे का गठन किया। वातावरण निर्माण के इस कार्यक्रम का प्रथम चरण 31अक्टूबर,92 को समाप्त हुआ। इस दौरान कला-जत्थे की सदस्यों द्वारा "लड़की पढ़कर क्या करेगी", "अंगूठा टेक रहे न एक","अनपढ़ मोलू राम तब और अब" आदि लघु नाटिकाएं तथा साक्षरता कक्षाएं शुरू की गईं। जत्थे के साथ एक पेंटर भी भेजा गया जो इस दौरान प्रत्येक गांव तथा मुहल्ले में साक्षरता सम्बन्धी नारे दीवारों पर लिखता रहा। दीवारों पर नारे लिखने का मुख्य उद्देश्य पढ़े-लिखे युवकों को प्रेरित करना था कि वह इस पवित्र यज्ञ में भाग लें तथा अनपढ़ों को साक्षरता के लिए प्रेरित करें। इसका परिणाम काफी उत्साहजनक रहा तथा भारी संख्या में पढ़े-लिखे युवक व युवतियां स्वैछिक कार्यकर्त्ता के रूप में आगे आए। दीवारों पर लिखे इन नारों से प्रभावित होकर कई समाज सेवी संस्थाएं भी साक्षरता के मैदान में उतरीं तथा उन्होंने कई गांवों को अंगीकृत कर लिया है। विभिन्न शिक्षिण संस्थाओं द्वारा गांव के लोगों को साथ लेकर साक्षरता से सम्बन्धित बैनर तथा झंडियां लेकर साक्षरता जलूसों का भी आयोजन किया गया। इसी श्रृंखला में 8 सितम्बर को यमुनानगर स्थित सिटी सेन्टर में "अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस" का आयोजन किया गया जिसमें सभी शिक्षण संस्थाओं, पंचायतों, स्वैछिक कार्यकर्ताओं तथा निरक्षर व्यक्तियों द्वार सारे शहर में विभिन्न जत्थों के रूप में साक्षरता सम्बन्धी बैनरों, झंडों तथा नारों के साथ जलूस निकाला गया। इस जिले में शत-प्रतिशत साक्षरता लाने के 'ज्योति-पुंज' द्वारा "प्रत्येक दस को पढ़ाये" का नारा दिया गया है। जिले को पूर्ण साक्षर बनाने के लिए 15,000 स्वैछिक कार्यकर्ताओं की सेवाएं ली जा रही हैं।

साक्षरों की संख्या में बढ़ोतरी

'ज्योति-पुंज' के चेयरमैन उपायुक्त यमुनानगर श्री सी.एन. चौधरी के अनुसार यमुनानगर जिले में पूर्ण साक्षरता कार्यक्रम के अन्तर्गत इस वर्ष फरवरी मास के अन्त तक लगभग 70 हजार निरक्षरों को साक्षर बनाने का लक्ष्य रखा गया। वर्ष 1992 के अन्त तक इस जिले में कार्यरत 3500 साक्षर कक्षाओं के माध्यम से 35 हजार लोगों को शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध करवायी गईं तथा जनवरी मास के अन्त 50 हजार निरक्षरों को इस कार्यक्रम के तहत लाया जा रहा है। इस जिले का सढ़ौरा खण्ड शिक्षा के क्षेत्र में काफी पिछड़ा हुआ है। इसलिए इस इलाके में साक्षरता कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

सढ़ौरा शहर में इस आयु वर्ग के लगभग 1741 निरक्षर हैं जिनमें से 615 पुरुष व 1126 महिलाएं है। इनके लिए नगर के विभिन्न वार्डों में साक्षरता कक्षाएं शुरू की गई हैं। यमुनानगर जिले के बिलासपुर जोन के 138 गांवों में से 126 गांवों में 756 साक्षरता कक्षाएं चल रही हैं जिनमें 6827 अनपढ़ शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। इनमें 2269 निरक्षर अनुसूचित जाति के हैं। इन जोन में कुल अनपढ़ों की संख्या 13578 है जिसमें से 5525 पुरुष व 823 महिलाएं हैं। छछरौली जोन के 157 गांवों में से 141 गांवों में 658 कक्षाएं चल रही हैं जिनमें 6716 अनपढ़ व्यक्ति शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।। रादौर ब्लाक के 92 गांवों में से 91 गांवों में 450 साक्षरता कक्षाएं चल रही हैं। इन कक्षाओं के माध्यम से 3678 अनपढ़ व्यक्ति साक्षर बनने का प्रयास कर रहे है। जिसमें 1287 पुरुष व 2391 महिलाएं है। यमुनानगर शहर में 525 साक्षरता कक्षाएं चल रही हैं जिसमें 5 हजार अनपढ़ व्यक्ति शिक्षा ग्रहण कर रहे है। जिसमें 700 पुरुष व शेष महिलाएं है। जगाधरी ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत 608 साक्षरता कक्षाओं में लगभग 6 हजार पुरुष व महिला तथा जगाधरी शहरी क्षेत्रों में 87 कक्षाओं में 900 अनपढ़ शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

हमीदा में 65 साक्षरता कक्षाएं चलायी जा रही है तथा इनमें लगभग 900 निरक्षर अक्षर ज्ञान प्राप्त कर रहे है। पुराना हमीदा के गढ़ी रोड पर भी पहली नवम्बर से कक्षाएं शुरू की गईं। यहां पर इस समय 24 महिलाएं पढ़ रही हैं। इन महिलाओं को अपना नाम लिखना,100 तक गिनती तथा सही दिशा के 3 पाठ पढ़ा दिये गये हैं।

गौरतलब बात यह है कि साक्षरता अभियान में सरकारी अध्यापकों की भी स्वैच्छिक सेवाएं ली जा रही हैं तथा उन्हीं सेवाओं का इस्तेमाल स्कूल समय समाप्त हो जाने के बाद किया जा रहा है। जिसके फलस्वरूप उनकी इस समाज सेवा से स्कूल की कार्य पद्वति तथा बच्चों की शिक्षा भी प्रभावित नहीं हो रही है।

अन्ततः इस जिले में साक्षरता अभियान अपने यौवन पर है तथा समाज के सभी वर्ग व स्वैच्छिक संस्थाएं ज्योति पुंज केसाथ कन्धे से कन्धा मिलाकर यमुनानगर को अगले वर्ष 15 अगस्त तक पूर्ण साक्षर जिला बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

जिला लोक संपर्क अधिकारी,

यमुनानगर (हरियाणा)

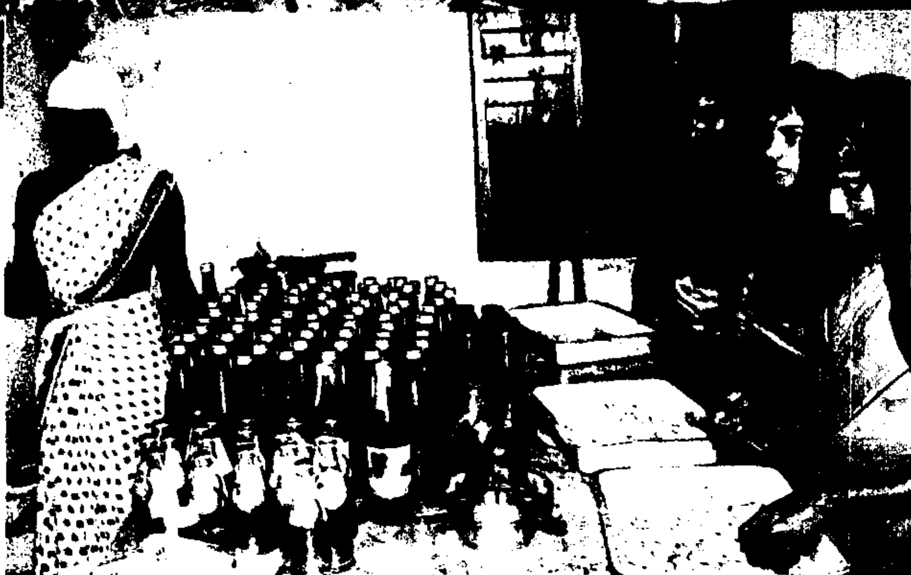

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/93
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/93
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित